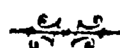
* ओ३म् *

॥ परमात्माजयति ॥

दयानन्दकेयजुर्वेदभाष्यकी समीक्षा।



मुरादाबाद निवासी

जगन्नाथदास सङ्कलित



द्वितीयबार	संवत्	मूल्य—
१०००	१९७१	प्रति पुस्तक -)॥

Printed and Published by P. B. D. S.
at the Brahma Press—Etawah.

॥ ओम् परमात्मा जयति ।

दयानन्दके यजुर्वेदभाष्यकी समीक्षा ।

प्राणाय नमो यस्य सर्वमिदं वशे ।
योभूतःसर्वस्येश्वरोयस्मिन्त्सर्वंप्रतितिष्ठम्॥

अथर्ववेदे कां० ११

दयानन्द सरस्वतीने अपने यजुर्वेद भाष्यके प्रारम्भ ही में मङ्गलाचरणरूप दो श्लोक ईश्वरस्तुति तथा भाष्य प्रारम्भ कालके वर्णन और यह भाष्य शतपथ निरुक्तादिके प्रमाणोंसे युक्त होगा इस अभिप्रायके लिखे हैं । फिर विश्वानिदे० यह श्रुति और द्वितीय पृष्ठमें चार दोहे लिखे हैं। इसके उपरान्त प्रत्येक अध्यायके प्रारम्भमें विश्वानिदेव० यह श्रुति लिखी है । और दूसरीवारके छपे सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ २६ में मंगलाचरणका खण्डन किया है। धन्य प्रथम ही अपने मतके विरुद्ध आचरण ! ॥

पृष्ठ २–विक्रमके संवत् १९३४ पौष सुदी १३ गुरुवार के दिन यजुर्वेदके भाष्य बनानेका आरम्भ किया ॥

पृष्ठ ३ ऋग्वेदके भाष्य करनेके पश्चात् यजुर्वेदके मन्त्र भाष्यका आरम्भ कियाजाता है—दयानन्दजीका

यह लेख (कि ऋग्वेदके भाष्य करनेके पश्चात् यजुर्वेदके मन्त्र भाष्यका आरम्भ किया जाता है) सर्वथा मिथ्या है क्यों कि उन्होंने अपने ऋग्वेदभाष्यके पृष्ठ ९ में लिखा है कि संवत् १९३४ मार्ग शुक्ल ६ भौमवारके दिन संपूर्ण ज्ञानके देनेवाले ऋग्वेदके भाष्यका आरम्भ करता हूं इति—अब बुद्धिमान् लोग विचार करें कि ऋग्वेदभाष्यका प्रारम्भ संवत् १९३४ मार्गशुक्ल ६ को और यजुर्वेदभाष्यका आरम्भ संवत् १९३४ पौष सुदी १३ को हुआ अर्थात् दयानन्दजीने जिस दिन ऋग्वेद भाष्यका आरम्भ किया उस से सवा महीनेके उपरान्त यजुर्वेदभाष्यका प्रारम्भ कर दिया। क्या कोई कोई बुद्धिमान् स्वीकार कर सकता है कि स्वामी जी ने सवा महीनेमें सम्पूर्ण ऋग्वेदका भाष्य लिखलिया और उसके पश्चात् ही यजुर्वेदभाष्यका आरम्भ किया? कदापि नहीं। यह बात मनुष्यकी शक्तिसे बाहर है असंभव है सर्वथा गप्प है। जिन्होंने भाष्यके आरंभ ही में ऐसा झूंठ लिखा उनसे आगे सत्यकी क्या आशा है? क्योंकि ऋग्वेदभाष्य अभी तक पूरा नहीं हुआ इससे उनका लिखना सर्वथा मिथ्या है॥

पृष्ठ १७ सब प्राणियोंको सुख पहुंचाने वाले हों ऐसी इच्छा सब मनुष्योंको करनी चाहिये॥

पृष्ठ ६२ सब प्राणियों पर नित्य कृपा करनी चाहिये॥

पृष्ठ २८६ प्राणीमात्रको कभी मत मार॥

अध्याय २५ पृष्ठ ४३६ किसीके भी ऊपर वज्र न छोड़ें॥

अध्याय २९ पृष्ठ ६७८ अहिंसारूप धर्मको सेवें॥

पृष्ठ ८७३ जैसे मैं दुष्ट काम करने वाले जीवोंके गले काटता हूं वैसे तू भी काट॥

पृष्ठ ८०४ पशुओंको नष्ट करनेके लिये॥

पृष्ठ १२८४ दुष्ट प्राणियोंके लियें वज्र चलाओ॥

पृष्ठ १३५८ जिन जंगली पशुओंसे ग्रामके पशु, खेती, और मनुष्योंकी हानि हो उनको राजपुरुष मारें।

पृष्ठ १३६७ जो हानि कारक पशु हों उनको मारे॥

पृष्ठ १३६३ जो जंगलमें रहने वाले नीलगाय आदि प्रजा को हानि करें वे मारने योग्य हैं॥

पृष्ठ १६३१ सोते हुओंके लिये वज्र॥

पृष्ठ २०५० जो इस संसार में बहुत पशुवाला होम करके हुत शेषका भोक्ता वेदवित् और सत्य क्रियाका कर्त्ता मनुष्य होवे सो प्रशंसाको प्राप्त होता है॥

दयानन्दजीके इस परस्पर विरुद्ध अधर्मरूप दया-शून्य आनन्दनाशक लेखको देखना चाहिये कि आप ही

सब प्राणियोंको सुख पहुंचाना उन पर नित्य कृपा करनी प्राणीमात्रको कभी न मारना किसीके भी ऊपर वज्र न छोड़ना अहिंसा रूप धर्मका सेवन करना लिखा। और आप ही जीवोंके गले काटना कटवाना पशुओंको नष्ट करना प्राणियोंके लिये वज्र चलाना, हानि कारक पशुओंको मारना, नीलगायको भी मारना, सोते हुओं के लिये वज्र और बहुत पशुवाला होम करके हुत शेष का खाना लिख दिया। वेदमें तो ऐसी परस्पर विरुद्ध आज्ञा हो नहीं सकती। यह स्वामीजी ही ने दयाशून्य होकर पशुओंका हनन करना लिखा है। पूर्व सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ३०३ में वंध्या गायका वध लिखा था वेद भाष्यमें वंध्या गाय नहीं तो नील गायका वध लिख दिया। इसके अतिरिक्त बहुत पशुवाला होम करके हुत शेषका खाना लिखा है। न जाने उनके शिष्यवर्ग बहुत पशुसे किस २ का होम करके हुत शेषके भोक्ता बनेंगे? क्या आश्चर्य है कि पूर्व सत्यार्थप्रकाश लिखित वंध्या गायका भी ग्रहण करें क्योंकि वह स्वामी जीका लेख सष्ट तो हो ही नहीं गया। पूर्व सत्यार्थप्रकाश ही के लेखानुसार समाजका एक दल मांस भक्षणकी पुष्टि कर

रहा है। यह सब कलिकालका प्रभाव है धर्मका अभाव है। सज्जनोंको उचित है कि अपने सत्यसनातन वेदादि सत्शास्त्र विहित धर्म पर आरूढ़ रहें दूसरोंको धर्मका उपदेश करें और अधर्मको निःशेष। (पृष्ठ १७ जो झूठका आचरण करने वाले हैं वे असुर राक्षस आदि नामोंके अधिकारी होते हैं इति—) इस लेखसे स्वामी जी असुर राक्षस आदि नामोंके अधिकारी ठहरते हैं क्योंकि उन्हों ने अपने ग्रन्थोंमें प्रायः वेदादि सत्यशास्त्र विरुद्ध झूठे लेख किये हैं और बहुधा प्रत्यक्ष झूठका आचरण किया है जो कि हम सम्यक् सिद्ध कर चुके हैं। यदि कोई उन का पक्षपाती इस विषयमें हमसे अब वार्त्तालाप करना चाहे तो उनके अनेक झूठ सिद्ध करनेको अब भी हम उद्यतहैं। स्वामी जीने अनेक विषय प्रथम जिस प्रकार लिखे दूसरीवार उसके विरुद्ध लिखे दोनोंमें एक लेख अवश्य झूठ होगा स्वामी जी प्रथम अद्वैत वादी रहे उसी संप्र-दायमें शिक्षा पाई यज्ञोपवीत तुड़वाया और शिखा कट-वाई फिर उस मतको आप झूठा जाना और उसका ख-ण्डन किया दोनोंमें से स्वामी जीका एक आचरण अवश्य झूठा है। ऐसे अनेक प्रमाण हैं विस्तार भयसे नहीं लिखते,

निदान स्वामी जी अपने लेखानुसार असुर राक्षस आदि नामोंके अधिकारी सिद्ध हुए ॥

पृष्ठ १९ वही ईश्वर उक्त श्रेष्ठ कर्म करनेके लिये कर्म करने और कराने वालोंको नियुक्त करता है। पृष्ठ २२८ अच्छे कामोंमें जल्दी प्रवेश करने वा कराने वाला जगदीश्वर है। पृष्ठ ३२५ जो अन्तर्यामी सब सुखोंका देने वाला है वह अपनी करुणा करके हम लोगोंकी बुद्धियों को उत्तम २ गुण कर्म स्वभावोंमें प्रेरणा करे। पृष्ठ ४५३ जैसे सत्य प्रेमसे उपासना किया हुआ परमेश्वर जीवों को दुष्ट मार्गोंसे अलग और धर्म मार्गमें स्थापन करके इस लोकके सुखोंको उनके कर्मानुसार देता है। पृष्ठ ५५६ में सब प्रेरक चराचरात्मा परमेश्वरके लिये। पृष्ठ २०८३ हे सुखके देनेहारे सत्य कर्मोंमें प्रेरक जगदीश्वर ।। अध्याय ३६ पृष्ठ ११२३ (परमेश्वर) हमको शुभ गुण कर्म स्वभावोंमें प्रेरणा करे । हम लोग इस बातको यथार्थ प्रकारसे नहीं जानते कि वह ईश्वर किस युक्तिसे हमको प्रेरणा करता है कि जिसके सहायसे ही हम लोग धर्म अर्थ काम और मोक्षों के सिद्ध करने को समर्थ हो सकते हैं। अध्याय ३६ पृष्ठ १२८७ आप हम लोगोंसे कु-

टिलता रूप पापाचरणको पृथक् कीजिये—ईश्वर पापाचरणमार्गसे पृथक् कर धर्मयुक्त मार्गमें चलाके विज्ञान देके धर्म अर्थ काम और मोक्षको सिद्ध करनेके लिये समर्थ करता है। स्वामीजीका इत्यादि लेख जीवों को कर्म करनेमें सर्वथा परतन्त्र अर्थात् अपने पूर्वकर्मानुसार ईश्वराधीन सिद्ध करता है। उन्होंने दूसरीवार के छपे सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ ५६० में जो लिखा है कि "जीव अपने कामोंमें स्वतन्त्र" यह लेख वेद विरुद्ध और महा अशुद्ध है हमने दयानन्दमत परीक्षामें स्वामी जी के अनेक लेखों और सत्शास्त्रोंके वचनोंसे जीवको शुभाशुभ कर्म करने और सुख दुःख रूप पुण्य पापके फल भोगने में सर्वथा परतन्त्र सिद्ध कर दिया है।

पृष्ठ २१ अपार सुखको प्राप्त होऊं। पृष्ठ २७६ जैसे खरबूजा का फल पकेकर (बन्धनात्) लताके संबन्धसे छूटकर अमृत के तुल्य होता है वैसे हमलोग भी (मृत्योः) प्राण वा शरीरके वियोगसे (मुक्षीय) छूट जावें। और मोक्ष रूप सुखसे अश्रद्धारहित कभी न होवें। श्रुतिका तात्पर्य यही है कि जैसे खरबूजा लताके संबंधसे छूटकर फिर कभी लताके साथ बन्धनको प्राप्त नहीं होता इसी प्र-

कार हमलोग भी (मृत्योः) मौत अर्थात् संसारके बंधनसे छूट जावें और मोक्षरूप सुखसे श्रद्धारहित कभी न होवें ॥

पृष्ठ ३३९ नाश रहित विज्ञानसे मोक्ष सुखको ग्रहण करता हूं ॥

पृष्ठ ८४१ जीवन मरणसे छूट मोक्ष सुखको अच्छे प्रकार प्राप्त होवें ॥

पृष्ठ ११८८ बंधके छेदक मोक्षप्राप्तिके हेतु इत्यादि

पृष्ठ १२२९ अनित्य साधनोंसे नित्य मोक्षके सुखको प्राप्त होवें ॥

पृष्ठ १८१४ अविनाशी सुखको प्राप्त होते हैं ॥

पृष्ठ १९३८ जन्म मरणके दुःखसे रहित हुए मोक्षसुखको प्राप्त हों ॥

पृष्ठ २१३१ वे मृत्युके दुःखको छोड़कर मोक्षसुखको ग्रहण करते हैं ॥

पृष्ठ २१४३ मृत्यु धर्म रहित विज्ञानको प्राप्तहोवें ।

अध्याय २१ पृष्ठ ३९ वे अक्षय सुखको प्राप्त होते हैं ॥

अध्याय ३१ पृष्ठ ८१० (नाकम्) सब दुःखरहित मुक्ति सुख को प्राप्त होते हैं ॥

अध्याय ३१ पृष्ठ ८१४ उसीको जानके आप (मृत्युम्) दुःखदायी मरणको उल्लंघन करजाते हो॥ परमात्मा को जानके ही मरणादि अथाह दुःखसागरसे पृथक् होसक्ते हैं॥

अध्याय ३२ पृष्ठ ८३१ जिसने (नाकः) सब दुःखोंसे रहित मोक्ष धारण किया ॥

अध्याय ३२ पृष्ठ ८३७ (अमृतम्) नाशरहित मुक्तिके स्थान॥

अध्याय ३८ पृष्ठ १२३० नाशरहित सामर्थ्यको मैं अपने में ग्रहण करता हूं। अक्षय सुखको प्राप्त होवें ॥ अध्याय ४० पृष्ठ १२७७ वह विद्वान् तिस पीछे नहीं संशयको प्राप्त होता॥ अध्याय ४० पृष्ठ १२८७ ईश्वर उपदेश करता है जो मेरा प्रेम और सत्याचरण भावसे शरणलेता है उसकी अंतर्यामीरूपसे मैं अविद्याका विनाशकर उसके आत्मा का प्रकाश करके शुभगुण कर्म स्वभावरूप वालाकर सत्य स्वरूप का आचरण स्थिर कर योगसे हुए विज्ञानको दे और सब दुःखोंसे अलग करके मोक्ष सुखको प्राप्त कराता हूं ॥ इति ॥

स्वामीजी ने पहिले अपने सब ग्रंथोंमें मुक्ति को बड़ी पुष्टिके साथ सदाही को लिखा था बीच में एक अन्य-मतावलंबीके एक तुच्छ प्रश्नका उत्तर न देसके तब मुक्तिसे पुनरावृत्ति मान बैठे हमने उनके उस कपोल कल्पितशास्त्र

विरुद्ध लेखके खण्डनमें मुक्तिप्रकाश नामकपुस्तक मुद्रित कराया था जिसमें स्वामी जीके अनेक लेखों और वेदादि सत्शास्त्र के वचनों तथा युक्तियों से मुक्ति को सदा के लिये सिद्ध कर दिया है ।

परंतु शोकहै कि समाजीलोग अबभी मुक्तिसे पुनरावृत्ति ही मानते हैं । अपने गुरुके केवल उस कथनको जो उन्होंने बीचमें एक अन्य मतावलंबी से पराजयको प्राप्त होकर मिथ्या कपोलकल्पनाकी थी सत्य जानते हैं और संपूर्ण सत्शास्त्रों तथा च—अपने गुरु ही के लिखे हुए आदि अन्तके अनेक वचनों पर कुछभी ध्यान नहीं करते हा॥

पृष्ठ ५५ वेदके शाखा शाखान्तर द्वारा विभाग ॥इति यहां स्वामी जी ने वेदके शाखा शाखान्तर द्वारा विभाग स्वीकार किये और दूसरीवारके छपे सत्यार्थप्रकाश के पृष्ठ ५८७ में लिखा कि ११२७ वेदोंकी शाखा जो कि वेदोंके व्याख्यान रूप ब्रह्मादि महर्षियों के बनाये ग्रन्थहैं ॥इति॥ कहिये परस्पर विरोधहै वा नहीं? अस्तु । वस्तुतः ११३१ शाखा वेद हीहैं उनमें से ११२७ को वेदोंके व्याख्यान कहना और चारको मूल वेद मानना बाबाजी की अज्ञता है क्योंकि उन्होंने जिन चार संहिताओंको मूलवेद मानाहै इस समय उनके अतिरिक्त जितनी शाखा

मिलती हैं वे उक्त संहिताओं के व्याख्यान रूप नहीं हैं किन्तु उनमें पूर्वोक्त चार संहिताओं ही के समान मंत्र हैं जिन को दयानन्द जी ने मूल वेद माना है वे ऋगादि संहिता शाकल माध्यन्दिनी, कौथमी और शौनकी नामक शाखा हैं। यदि दयानंदी लोग शाखाओंको वेद न मानें तो उक्त चार संहिताओं को भी वेद न मानें किन्तु उनको भी ब्रह्मादि महर्षियों के बनाये वेदोंके व्याख्यान रूप बतलायें और अन्य चार वेदों का पता लगायें ॥

पृष्ठ ७८ चौथे सर्वेषां देवानामायतनम् ॥ शं०।१४।२।३।८ पृष्ठ २०८८ द्वे सृती अशृणवं पितृणामहं देवानामुत मर्त्यानाम् पृष्ठ २२४७ देवाऽअमृतामादयन्ताम् ॥ पृष्ठ २२४८ (अमृताः) आत्मस्वरूप से मृत्यु धर्म रहित (देवाः) विद्वान् लोग। अध्याय ३० पृष्ठ ७३१ देवलोकाय प्रेषितारं मनुष्य लोकाय प्रकरितारम्। अध्याय ३४ पृष्ठ १०७७ स देवेषु कृणुते दीर्घमायुः स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः ॥ स्वामी जी विद्वानों ही को देवता मानते हैं परन्तु उनके ऊपर लिखे हुए वचनोंसे स्पष्ट प्रकट है कि देवता मनुष्योंसे पृथक् हैं ॥ पृष्ठ १२७ ईश्वरने सृष्टिकी आदिमें दिव्य गुण वाले अग्नि वायु रवि और अंगिरा ऋषियोंके द्वारा

चारों वेदोंके उपदेशसे सब मनुष्योंके लिये इत्यादि, स्वामी जी अपनी अज्ञताके कारण सृष्टिकी आदिमें अग्नि वायु आदिके द्वारा वेदोंका प्रकाश मान बैठे थे वही कपोल कल्पना यहां सर्वथा अप्रसंग और असमंजस प्रकटकी है। सम्पूर्ण सच्छास्त्रों और समस्त विद्वानोंका यह मत है कि सृष्टिकी आदिमें सबसे प्रथम परमात्माने श्री ब्रह्माजीको उत्पन्न किया और उन ही के हृदयमें वेदोंका प्रकाश किया उनके द्वारा दूसरों को वेदोंकी प्राप्ति हुई। ऐसा किसी ने भी नहीं माना कि सृष्टिकी आदिमें सबसे प्रथम अग्नि वायु आदित्य उत्पन्न हुए और परमात्मा ने उनके हृदय में वेदों का प्रकाश किया। इस विषयमें श्रीमत् मुंशी इन्द्रमणिजीने वेदद्वारप्रकाश पुस्तक मुद्रित कराया था उसमें स्वामी जी की इस झूंठी कपोल कल्पना का सम्यक् खण्डन किया गया है अतएव यहां विशेष नहीं लिखते॥

पृष्ठ १७७ फूलोंकी माला धारण कियेहुए ब्रह्मचारीको अच्छे प्रकार स्वीकार कीजिये। यहां तो स्वामीजी ब्रह्मचारीको पुष्पमाला धारण कराते हैं और दूसरी वारके छपे सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ ५१ में ब्रह्मचारीको मालाका

निषेध लिखते हैं कहिये दोनोंमें कौनसा लेख सत्य और कौनसा झूठ है? । यहां उक्त सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ ३३२ का न्याय स्मरणीय है कि इन दोनोंमें से एक बात सच्ची दूसरी झूठी ऐसा होकर दोनों बात झूठी ॥

पृष्ठ २५१ जो २ (एनः) पाप वा अधर्म करा वा करेंगे सो सब दूर करते रहैं—पृष्ठ २५६ मन आदि इन्द्रियों से किया वा मरण धर्मवाले शरीरों से किये हुए (एनः) पापोंको दूरकर शुद्ध होता हूं—पृष्ठ २८३ पापों से निवृत्त होना—पृष्ठ ४८३ छूटगये हैं पाप जिनके—पृष्ठ ६९१ पाप के दूर करने वालेहो—पृष्ठ १४१८ अच्छे प्रकार पापोंकी निवृत्ति करने हारा कर्म—अध्याय २२ पृष्ठ १८७ जिससे पाप रहित कृतकृत्य होकर—अध्याय ३४ पृष्ठ १०६५ पापोंकी शुद्धि किया करो—अध्याय ३५ पृष्ठ १०९२ हमारे पापको शीघ्र सुखादेवे—अध्याय ३५ पृष्ठ ११०० हमारे निकटसे पाप को दूर कीजिये—अध्याय ३५ पृष्ठ १११५ हमारे (अघम्) पापको शीघ्र दूर करे—अध्याय ३६ पृष्ठ ११४ हे भगवन् ईश्वर! पाप हरनेवाले—अध्याय ३९ पृष्ठ १२५७ पाप निवृत्ति के लिये ॥

दयानन्दानुयायियोंका सिद्धान्त है कि पाप विना भोगे

किसी प्रकार कभी नहीं छूटता। दूसरी वारके छपे सत्यार्थ प्रकाशके पृष्ठ ३२२ में लिखा है कि पाप कभी नहीं कहीं छूटसकता विनाभोगे अपना नहीं कटते-उसीका पृष्ठ ३७८ जो वेदोंको सुनते तो विना भोगके पाप पुण्यकी निवृत्ति न होनेसे पापोंसे डरते॥

अब बुद्धिमान् लोग ध्यान करें कि स्वामीजीने यजुर्वेद के भाष्यमें कितनी जगह पापोंका नाश होना आप लिखा है। वेदादि सत्शास्त्रोंमें ईश्वर भक्ति और पुण्य कर्म करनेसे पापोंका नाश होना प्रायः स्पष्ट सिद्ध है। यदि ऐसा न मानें तो जीवको मुक्ति कभी प्राप्त नहीं हो सकती। अब दयानन्दी लोग अपने गुरुके सत्यार्थ प्रकाश लिखित सिद्धान्तको झूठा जानें वा यजुर्वेदका भाष्य अशुद्ध मानें स्वामीजी की अज्ञता किसी प्रकार दूर नहीं हो सकती॥

पृष्ठ २८३ यज्ञ करनेवाला यजमान है वह आपकी आज्ञा से जिन उत्तम २ यव आदि अन्नोंको अग्नि में होम करता है इति॥ सनातनधर्मावलम्बी लोग यव तिलादि पदार्थों हीसे होम करते हैं-परन्तु स्वामीजीने इसका निषेध किया और पूर्व सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ ४५ पर वेद ब्राह्मणोंके नामसे कस्तूरी केशर और मांसादि पदार्थोंसे होम करना लिखा

जो कि सर्वथा अयुक्त है। ईश्वरका धन्यवाद है कि यजुर्वेदके भाष्यमें उनसे वह सत्यबात लिखी गई परन्तु सनातनीलोग अबभी यवादि अन्नोंसे होम नहीं करते यह पक्षपात नहीं तो और क्या है ?॥

पृष्ट ३८० हे जगदीश्वर! मैं और आपपढ़नेपढ़ानेहारे दोनों प्रीतिके साथ वर्त्तकर विद्वान् धार्मिक हों कि जिससे दोनोंको विद्या वृद्धिसदा होवे इति-स्वामीजीके विचारमें ईश्वर पूर्ण विद्वान् और धार्मिक नहीं है धन्य

पृष्ठ ३८३ चिकित्साशास्त्रके अनुसार सब आनन्दोंको भोगें॥ पृष्ठ १०२१ श्रेष्ठ विद्वान् वैद्य होकर निदान आदि के द्वारा सब प्राणियोंको रोग रहित रक्खें इति॥

स्वामीजी दूसरी बारके छपे सत्यार्थप्रकाश के पृष्ठ ५८७ में ब्रह्मादि महर्षियोंके बनाये ग्रंथोंमें बेद विरुद्ध वचन बतलाते हैं और पृष्ट ७२ में कहते हैं कि (असत्यमिश्रं सत्यं दूरतस्त्याज्यमिति) असत्यसे युक्त ग्रंथस्थ सत्यको भी वैसे ही छोड़ देना चाहिये जैसे विषयुक्त अन्न को फिर किस चिकित्सा शास्त्र के अनुसार सब आनन्दोंको भोगें और किन ग्रन्थोंको पढ़कर वैद्य होवें तथा किन निदान ग्रन्थों के द्वारा सब प्राणियों को रोग रहित रक्खें ?॥

पृष्ठ ८७६ जो आयुर्वेद को जानने हारे हैं उन से अमृतरूपी औषधि विद्याका सेवन कीजिये। पृष्ठ १०३६ इस आयुर्वेद विद्यामें स्थित होके हम लोगोंकी दुष्ट बुद्धिको सबप्रकार दूर कीजिये। दूसरीवारके छपे सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ २०५ में लिखा है कि इतिहास जिस का हो उसके जन्मके पश्चात् लिखा जाता है वह ग्रंथ भी उसके जन्मे पश्चात् होता है। वेदोंमें किसी का इतिहास नहीं। स्वामीजीके इस लेखसे सिद्ध होता है कि आयुर्वेदका निर्माण यजुर्वेदके प्रकाशसे प्रथम हुआ क्योंकि यजुर्वेदमें आयुर्वेदका वर्णन है इस आयुर्वेद विद्यामें ऐसा कहने से स्पष्ट सिद्ध है कि जिस समय यजुर्वेदका प्रकाश हुआ उस समय आयुर्वेद विद्यमानथा और यह प्रत्यक्ष अशुद्ध है॥

पृष्ठ ४४५ हे जगदीश्वर! जिसकारण आप सुख दुःख को सहन करने और कराने वाले हैं इतिद यानन्दकी बुद्धिको देखिये कि ईश्वर को सुख दुःखका सहन करने वाला भी ठहरा दिया, धन्य!॥

पृष्ठ ५७० हे शिष्य! मैं तेरे जिससे मूत्रोत्सर्गादि किये जाते हैं उस लिंगको पवित्र करता हूं तेरे जिससे रक्षा की जाती है उस गुदेंद्रियको पवित्र करता हूं इति। इस लेखका तात्पर्य कुछ समझमें नहीं आता हमारे विचार

में तो स्वामीजीने ऐसे लेखोंसे वेदोंको कलंकित किया है हा ! ॥

पृष्ठ ५१९ (और स्वाहा) बिजली आग्नेयास्त्रादि तारबरकी तथा प्रसिद्ध सब कला यन्त्रोंको प्रकाशित करनेवाली विद्यासे विद्युत्‌रूप अग्निको अच्छीप्रकार जान ॥ इति ॥ स्वामीजी कहा करते थे कि वेदमें सब विद्या हैं इस कारण तारबरखी (तारबरकी) भी लिख-मारी यह तो कोई देखताही नहीं कि वेदमें है वा स्वामीजीकी कपोलकल्पनाही है अंगरेजी विद्याके नवशिक्षित उनके परमभक्त तो गुरुजीका गुणानुवादही गावेंगे कि स्वामीजीके अतिरिक्त किसीने वेदका अर्थही नहीं जाना परन्तु कोई न्यायाधीश उन अच्छोंसे कहे कि यदि वेदमें तारबरकीकी विद्या है तो तुम समाजके मुख्य पंडितोंसे जिन्होंने सरकारी रीतिसे इस विद्याको न सीखा हो कहींको तारके द्वारा खबर भिजवाओ और उत्तर मगाओ अथवा तारमें कोई दोष आजाये तो उसे सुधरवाओ तारका बनाना तो कठिन रहा कोई एक छोटीसी खबर भी न भेज सकेगा फिर ऐसी झूंठी बातें बनानेसे क्या लाभ ? । वास्तवमें स्वामीजीने वेदके वास्तविक अ-

यको नष्ट भ्रष्ट कर दिया और अपने भाष्यमें सर्वथा मनमानी झूंटी कपोलकल्पनायें भरदीं । पृष्ठ५३३ पदार्थ "हे वैश्यजन ! तू (कार्षिः) हल जोतनेयोग्यहै„। इसकेभावार्थमें लिखते हैं कि "इस कारण विद्वान् लोग निर्बुद्धि जनोंको खेतीवारीहीके कामोंमें रखते हैं क्योंकि वे विद्याका अभ्यास करनेको समर्थही नहीं होते हैं"यहां स्वामीजीने वैश्यको हल जोतने योग्य लिखा और उसके लिये यह सिद्ध किया कि विद्वान्लोग निर्बुद्धि जनोंको खेतीवारीही के कामोंमें रखते हैं क्योंकि वे विद्याका अभ्यास करनेको समर्थही नहीं होते हैं । ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के पृष्ठ १०६ में लिखा है कि "खेती व्योपार और सवदेशोंकी भाषाओंको जानना तथा पशुपालन आदि मध्यम गुणों से वैश्य वर्ण सिद्ध होता है"दूसरीवारके छपे सत्यार्थ प्रकाशके पृष्ठ ९१ में "गाय आदि पशुओंका पालन वर्द्धन करना विद्याधर्मकी वृद्धिकरने करानेके लिये धनादिका व्यय करना अग्निहोत्रादियज्ञोंका करना वेदादि शास्त्रों का पढ़ना" वैश्यका गुणकर्म लिखा है ऐसे परस्पर विरुद्ध लेखों बुद्धिमानोंको स्वामीजी की बुद्धिका सम्यक् परिचयसे हो सकता है ॥

पृष्ठ ६०३ धनुर्वेदके जानने वाले विद्वान् लोग उस धनु· र्वेदकी शिक्षासे इत्यादि–जैसे सत्पुरुष धनुर्वेदके जानने वाले परोपकारी विद्वान् लोग धनुर्वेदमें कही हुई क्रि· याओंसे इत्यादि—यहां भी स्वामीजीके पूर्वोक्त मता· नुसार वही बात सिद्ध है कि धनुर्वेद यजुर्वेदके प्रकाश से प्रथम विद्यमान था ॥

पृष्ठ ६७५–हे परमेश्वर! (ध्रुवक्षितिः) जिन आपमें भूमि स्थिर होरही है ॥ इति ॥ देखिये यहां श्रुतिमें (ध्रुवक्षि· तिः) पद स्पष्ट विद्यमान है जिसके अर्थमें स्वामीजीने भी पृथ्वीको स्थिर लिखा फिर दूसरीबारके छपे सत्यार्थ प्रकाशके पृष्ठ २२८ में जो उन्होंने पृथ्वीका घूमना लि· खा है वह वेदविरुद्ध नहीं तो और क्या है ? ॥

और यजुर्वेद अध्याय ३ (आयंगौः०) इस मंत्र ६ के भाष्यमें तथा ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के पृष्ठ १३६ पर उसी मंत्रकी व्याख्यामें जो स्वामीजीने पृथ्वीका च· लना और घूमना लिखा है वह पूर्व लिखित (ध्रुवक्षितिः) इस श्रुतिपद तथा स्वामीजी ही की लिखी व्याख्याके वि· रुद्ध है । आयं पद पुल्लिंग है उसके साथ गौः पदसे पृथ्वी का ग्रहण करना स्वामीजी की अविद्याका द्योतक है कि

उनको लिंगज्ञान भी न हुआ, वस्तुतः वहां गौःपदसे सूर्य्य का ग्रहण होना चाहिये। अथर्ववेदमें (ध्रुवाद्यौर्ध्रुवा पृथिवी) ऐसी श्रुति है। सिद्धांत शिरोमणि गोलाध्यायमें ("भूरचला स्वभावतः) ऐसा लिखा है। स्वामीजीका यह सिद्धान्त कि पृथ्वी चलती है वेदादि सत्शास्त्रों और समस्त विद्वानोंके विरुद्ध है। परन्तु ऐसा न मानते तो अंगरेजीवाले उनको परम विद्वान् कैसे जानते और समाजोंकी उन्नति कैसे होती ? ॥

पृष्ठ ६३५ ईश्वर कहता है कि हे (इन्द्र) सब सुखों के धारण करनेहारे (शूर) हम लोगोंको सब जगहसे भय रहित कर इति—यहां स्वामीजी की बुद्धिने ईश्वर को भी भय युक्त कर दिया धन्य ! ॥

पृष्ठ ६६७ विवाहकी कामना करने वाली स्त्रीको चाहिये कि जो छल कपट आदि आचरणोंसे रहित प्रकाश करने और एकही स्त्रीको चाहनेवाला जितेन्द्रिय सब प्रकारका उद्योगी धार्मिक और विद्वान् पुरुष हो उसके साथ विवाह करके आनन्दमें रहे।

पृष्ठ ६६९ जो प्रमादी पुरुष विवाहिता स्त्रीको छोड़ परस्त्रीका सेवन करता है वह इस लोक और परलोकमें

दुर्भागी होता है। और जो संयमी अपनी ही स्त्रीका चा- हने वाला दूसरेकी स्त्रीको नहीं चाहता वह दोनों लोकमें परम सुखको क्यों न भोगे ? इससे सब स्त्रियोंको योग्य है कि जितेन्द्रिय पतिका सेवन करें अन्यका नहीं ॥

पृष्ठ ६८४ विना विवाहके स्त्री पुरुष वा पुरुषस्त्रीके समागमकी इच्छा मनसे भी न करें पृष्ठ ७६३ हे धर्ममें न चित्त देने वाले पते! जो पराई पत्नियां हैं उनमें व्यभि- चारसे वर्त्तमान तुमको मैं वहांसे अच्छे प्रकार छिपाती हूं। हे अधर्ममें चित्तदेने वाले पते—औरोंकी पत्नियों के समीप मूर्खपनसे जाने वाले तुझको मैं वहांसे अच्छे प्रकार छुड़ाती हूं। हे कुचालमें चित्त देने वाले पते ! पर पत्नियोंके समीप अधर्मसे जाने वाले तुझको वहांसे मैं अच्छे प्रकार पृथक् करती हूं। हे चंचल चित्तवाले पते ! परपत्नियोंके समीप उनको दुःख देते हुए तुमको मैं वहांसे वार २ कंपाती हूं। हे कठोरचित्त पते ! भौं २ बोलने वाली परपत्नियों के निकट कुचालसे जाते हुए तुमको मैं अच्छे प्रकार हटाती हूं। पृष्ठ ८१० जो पुरुष अपनी २ ही स्त्रीके साथ क्रीड़ा करते हैं वे संपूर्ण ऐश्वर्य को संचित कर राज्यके योग्य होते हैं ॥

पृष्ठ १०९ विवाह समयमें स्त्री पुरुषको चाहिये कि व्यभिचार छोड़नेकी प्रतिज्ञाकर व्यभिचारिणी स्त्री और लंपट पुरुषोंका संग सर्वथा छोड़ आपसमें भी अति विषयासक्तिको छोड़ और ऋतुगामी होके परस्पर प्रीति के साथ पराक्रम वाले संतानोंको उत्पन्न करें—

पृष्ठ १०७१-ये दोनों आपसमें भेद वा व्यभिचार कभी न करें किन्तु अपनी स्त्रीके नियममें पुरुष और पतिव्रता स्त्री होकर मिलके चलें—

पृष्ठ १०९२ राजपुरुषोंको चाहिये कि जो व्यभिचारी मनुष्य होवें उनको अग्निमें जलाने आदि भयंकर दण्डोंसे शीघ्र ताड़ना देकर वशमें करें—

पृष्ठ १२०८ जो पुरुष अपनी विवाहिता स्त्रीको छोड़ अन्य स्त्रीके निकटजावे वा स्त्री दूसरे पुरुषकी इच्छा करे तो वे दोनों चोरके समान पापी होते हैं—

पृष्ठ १३१३ अपनी स्त्रीको छोड़ अन्य स्त्रीकी इच्छा न पुरुष और न अपने पतिको छोड़ दूसरे पुरुषका संग स्त्री करे—

अध्याय २३ पृष्ठ २२६ हे राजन्! जो स्त्रियोंके बीच प्राणियोंका मांस खाने वाला व्यभिचारी पुरुष वा पुरुषों

के बीच उक्त प्रकारकी व्यभिचारिणी स्त्री वर्त्तमान हो उस पुरुष और स्त्रीको बांधकर ऊपरको पग और नीचे को शिर करके ताड़नाकर । हे राजन् ? जो विषय सेवामें रमते हुए जन वा वैसी स्त्री व्यभिचार को बढ़ावें उनर को प्रबल दंडसे शिक्षा देनी चाहिये ॥इति॥ स्वामीजी के यजुर्वेदभाष्य में इस प्रकारके और भी वचन हैं जो विस्तार भयसे नहीं लिखे । अब बुद्धिमानोंको पक्षपात रहित होकर विचार करनाचाहिये कि उन्होंने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका तथा नवीन सत्यार्थप्रकाशमें जो एक स्त्री को ग्यारह पुरुषों तथा एक पुरुषको ग्यारह स्त्रियों तक से नियोग करने की आज्ञा लिखी है उसी सत्यार्थप्रकाश में प्रतिके परदेश जानेपर स्त्री को दूसरे पुरुष से संतानोत्पत्ति करने का उपदेश किया है-जो पुरुष अत्यंत दुःख दायक हो तो स्त्रीको उचित है कि उसको छोड़ के दूसरे पुरुष से नियोगकर, संतानोत्पत्ति करके उसी विवाहित पतिके दायभागी संतानोत्पत्ति कर लेवे। यह शिक्षाकी है । गर्भवती स्त्रीसे एक वर्ष समागम न करने के समय में पुरुष वा स्त्रीसे न रहाजाय तो किसी से नियोग करके उसके लिये पुत्रोत्पत्ति करदे । यह असमंजस लेख लिखा है । जब पति सन्तानोत्पत्ति में असमर्थ

होवे तब अपनी स्त्री को आज्ञा देवे कि हे सुभगे सौ-भाग्य की इच्छा करने हारी स्त्री तू मुझसे दूसरे पति की इच्छा कर। क्योंकि अब मुझसे सन्तानोत्पत्ति की आशा मत करे। यहां तक लज्जाको तिलाञ्जली दी है इत्यादि सम्पूर्ण नियोग नामक लेख विषयासक्ति और व्यभिचार को बढ़ाने वाला तथा यजुर्वेद भाष्यके विरुद्ध नहीं तो और क्या है। आर्योद्देश्य रत्नमाला के पृष्ठ२० पर दयानन्दजी ही का लिखा व्यभिचार का लक्षण अपनी स्त्री के विना दूसरी स्त्री के साथ गमन करना इत्यादि है॥

पृष्ठ ६७५ गृहस्थ जनोंको चाहिये कि इस प्रकारका प्रयत्न करें कि जिससे तीनों अर्थात् भूत भविष्यत् और वर्त्तमान कालमें अत्यन्त सुखी हों॥इति॥ कोई प्रयत्न ऐसा नहीं हो सकता जिस से भूतकाल में सुख हो यह लेख स्वामी जी की महती अज्ञता का द्योतक है॥

पृष्ठ ७७० पुत्र अपनी माताका दूध पीवै। संस्कार विधि मुद्रित संवत् १९३३ के पृष्ठ ३६ तथा दूसरीवारके छपे सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ २९ में लिखा है कि माता पुत्र को दूध न पिलावे किन्तु धायी पिलावे। स्वामी जी

का यह लेख यजुर्वेदभाष्य के विरुद्ध है। यजुर्वेद भाष्य ही के पृष्ठ ९७७ में लिखा है कि राजा सब स्त्रियों को विद्वान् और उनसे जो उत्पन्न हुए बालक विद्या युक्त धाइयों के अधीन करे जिस से बालक शिक्षा के विना न रहें और स्त्री भी निर्बल न हो। कहिये ऐसा विरोध विद्वानों के लेख में होता है वा अज्ञों के ?

पृष्ठ ८१० जो एक समष्टि वायु, प्राण, अपान, व्यान उदान, समान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त, और धनञ्जय (दश) बारहवां मन तथा इसके साथ श्रोत्र आदि दश इन्द्रिय और पांच सूक्ष्मभूत ये सब २७ सत्ताइस पदार्थ ॥इति॥ यहां एक की भूल है स्वामी जी की बुद्धि प्रतिकूल है ॥

पृष्ठ ८१७ वेदवेदाङ्गोपांगों के पारदर्शी। पृष्ठ ८५१ साङ्गोपाङ्ग चारों वेदों को पढ़ने वाले। पृष्ठ ८६८ चारवेद चार उपवेद अर्थात् आयुर्वेद धनुर्वेद गांधर्ववेद तथा अर्थवेद छः अंग शिक्षा कल्प व्याकरण निरुक्त छन्द और ज्योतिष। पृष्ठ १०१३ जो पुरुष वा स्त्री सांगोपांग सार्थक वेदोंको पढ़के। पृष्ठ १०५६ अंग उपांगोंके सहित वेद पढ़ाने हारे अध्यापक, इत्यादि यहां वही पूर्वोक्त आक्षेप है कि स्वामी जी के मतानुसार यजुर्वेद के प्रादुर्भाव से

प्रथंन आयुर्वेद, धनुर्वेद, गांधर्ववेद, तथा अथर्ववेद और शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छंद, और ज्योतिष विद्यमान थे वा स्वामीजीका वेदभाष्य उनकी असमंजस कपोल कल्पना से भरा है अस्तु ॥

पृष्ठ ८४१ में ईश्वर सब मनुष्योंको आज्ञा देता हूं कि तुम लोग मेरे तुल्य धर्मयुक्त गुण कर्म और स्वभाववाले पुरुष हो की प्रजा होओ यह लेख सर्वथा असम्भव है ज-गत्में कोई मनुष्य कभी ईश्वरके तुल्य धर्मयुक्त गुणकर्म और स्वभाववाला नहीं हो सक्ता। दूसरीवार के छपे सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ २४१ में लिखा है कि जीव मुक्त होकर भी शुद्ध स्वरूप अल्पज्ञ और परिमित गुणकर्म स्वभाववाला रहता है परमेश्वरके सदृश कभी नहीं होता

पृष्ठ ८६२ (पंच.) पूर्वादि चार और एक ऊपर नीचे की दिशाओं को ॥इति॥ पृष्ठ ९४६ (पंच) पूर्व आदि चार और ऊपर नीचे एक पांच दिशा ॥इति॥ स्वामी जी की गणित विद्याभी विचित्र है ऊपर नीचे दो दिशा को एक ही गिनते हैं, धन्य ? पृष्ठ ८६२ हे सभाजनो ? वायु के समान आप जैसे गाय, घोड़ा, भैंस, ऊंट, बकरी भेड़, और गधा, इन सात गांवके पशुओंको बढ़ाते हो

वैसे उनओं मैं भी बढ़ाऊं ॥ इति ॥ हे समाजस्थ पुरुषो! तुम को अपने स्वामीकी आज्ञानुसार भेड़ बकरी और गधोंका बढ़ाना भी आवश्यक हुआ। अतएव प्रत्येक समाजी दो २ चार २ भेड़ बकरी और गधो पालो जिस से भेड़ बकरी और गधों की वृद्धि हो ॥

पृष्ठ ९२६ जो राज पुरुष और प्रजा पुरुष वेद और ईश्वरकी आज्ञाको छोड़के अपनी इच्छाके अनुकूल प्रवृत्त होवें तो इनकी उन्नतिका विनाश क्यों न हो?। पृष्ठ ९३५ वेद और ईश्वरकी आज्ञाका सेवन करते हुए सब लोग एक सवारी एक बिछौने पर बैठें ॥ इति ॥ स्वामी जी के इस लेख से जाना गया कि वेद और पदार्थ है तथा ईश्वराज्ञा और, अब समाजी लोग बतलावें कि वह ईश्वरकी आज्ञा वेदोंके अतिरिक्त किस ग्रन्थ द्वारा प्रकट होती है? ॥

पृष्ठ ९३१ हे प्रजाके स्वामी ईश्वर! जो जीव प्रकृति आदि वस्तु सब इच्छा रूप आदि गुणोंसे युक्त हैं॥इति॥ प्रकृतिमें इच्छा गुण होना सर्वथा असम्भव है क्योंकि इच्छा चेतनका धर्म है और प्रकृति जड़ है—

पृष्ठ ९३१ हे रुद्र दुष्टोंके रुलाने हारे परमेश्वर! आप

र्का जो दुःखोंसे छुड़ानेका हेतु उत्तम नाम है ॥ इति ॥
दूसरी वारके छपे सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ ३०६ में जो लिखा है कि नाम स्मरणसे कुछ भी फल नहीं होता वह यजुर्वेद भाष्यके विरुद्ध है ।

पृष्ठ ७७८ हे कारीगर पुरुष जो तेरे साथ एक स्थान में वर्त्तमान हम लोग जो भूमि खोदने और विवाहित उत्तम स्त्रीके समान कार्य्योंको सिद्ध करने हारी लोहे आदिकी कसी है जिससे कारीगर लोग भगर्भ विद्याको जान सकें उसको ग्रहण करके जगती मंत्रसे विधान किये सुख दायक स्वतंत्र साधनसे प्राणोंके तुल्य विद्युत् आदि अग्निको खोदनेके लिये सब प्रकार समर्थ हों उसको तू बना ॥

मनुष्योंको उचित है कि अच्छे खोदनेके साधनोंसे पृथ्वीको खोद और अग्निके साथ संयुक्त करके सुवर्ण आदि पदार्थोंको बनावें ॥

हे दयानन्दियो ! किसी लुहारके पास जाओ और स्वामी जीके लेखानुसार उससे प्रार्थना करो कि वह तुमको भूमि खोदनेके लिये लोहे आदिकी कसी बनादे । देखिये कैसा वेदमंत्रका अनर्थ किया है जो कि

सर्वथा अनुचित और उन्मत्त कीसी बड़ है। और अ-ज्ञताकी जड़। कहीं भूमि खोदनेके लिये कहते हैं और कहीं विद्युत् आदि अग्निको खोदनेके लिये फिर यह कथन कि पृथ्वीको खोद और अग्निके साथ संयुक्त करके सुवर्ण आदि पदार्थोंको बनावें। इसकी स्पष्ट विधि क्यों न लिखी कि इस रीतिसे सुवर्ण आदि पदार्थोंको बनावे। यदि स्वामीजी को सुवर्ण आदि पदार्थों के बनाने की क्रिया प्रकट थी तो नित्य चेलोंसे चंदा क्यों मांगतेरहे? दो चार मन सुवर्ण बनाकर सारे कार्य सिद्ध क्यों न कर लिये? ध्यानरहे कि यह वेदमन्त्रका अर्थ नहीं है किन्तु स्वामीजी का अनर्थ है जो कि सर्वथा वृथाहै और जिस से वेद की स्पष्ट निन्दा है॥

पृष्ठ १८५१ वैद्यकशास्त्रकी रीति से बड़ी २ औषधियों से पाक बनाके और विधिपूर्वक गर्भाधान करके पीछे पथ्यसे रहें इति॥ वेदके प्रकाशसे प्रथम जो कोई वैद्यक का ग्रन्थ विद्यमान था ईश्वरने उसका नाम क्यों न प्रकट किया अथवा बड़ी २ औषधियोंके नाम तथा पाक बनानेकी क्रिया आदि ही क्यों न कह दी वेदके इतने से उपदेश से क्या लाभ हुआ॥

पृष्ठ ११०९ वामदेवऋषिने गाने वा पढ़ाये सामवेद इत्यादि। पृष्ठ २१३२ अंगिरा विद्वान् इति। यहांसे दूसरी वारके छपे सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ २०५ का वह लेख झूठा हुआ कि किसी मनुष्यकी संज्ञा वा विशेष कथाका प्रसंग वेदोंमें नहीं। स्वामीजीको अपना लेखभी स्मरण न रहा॥

पृष्ठ ११२६ जो पुरुष ईश्वरके समान प्रजाओंको पालने और सुख देनेको समर्थ हो वही राजा होनेके योग्य होता है इति। यह महाअसम्भव बात है। क्योंकि कोई पुरुष ईश्वरके समान गुणवाला जगत्में नहीं हो सकता॥

पृष्ठ १२१४ खेतोंमें विष्ठा आदि मलीन पदार्थ नहीं डालने चाहिये। इति। संवत् १९३३ की छपी संस्कारविधिके पृष्ठ १५० पर लिखा है कि मृतकका भस्म और अस्थिको भूमिमें गाढ़ देवें अथवा बाग वा खेतमें डाल देवें क्या वह मलीन पदार्थ नहीं? वेद कहता है कि खेतोंमें मलीन पदार्थ न डालना चाहिये और स्वामीजी बाग और खेतोंमें मलीन पदार्थके डालनेकी आज्ञा देते हैं यह उनकी मलीन बुद्धिका दोष है वा और कुछ॥

पृष्ठ १२३१ श्रेष्ठ वैद्यसे शिक्षाको प्राप्त हुए तुम लोग

ओषधियोंकी विद्याको प्राप्तहो पृष्ठ १२३५ औषधियोंको जाननेवाले होओ। पृष्ठ १२४८ जिनसे जीवके ग्राहक व्याधि और क्षयी राजरोगका नाश होजाता है उन औषधियों को श्रेष्ठ युक्तियोंसे उपयोग में लाओ। पृष्ठ १२३९ जो मनुष्यलोग शास्त्रके अनुसार औषधियोंका सेवन करें तो सब अवयवोंसे रोगोंको निकालके सुखी रहते हैं। पृष्ठ१२४७ओषधियुक्त पदार्थों के साथ राजरोग हट जाता है ओषधियोंका सेवन योगाभ्यास और व्यायामके सेवनं से रोगोंको नष्टकर सुखसे वर्तें पृष्ठ १२४२ अनुकूलता से मिलाई हुई ओषधि सबरोगोंसे रक्षा करती है हे स्त्रियो। तुमलोग ओषधि विद्याके लिये परस्पर सम्वाद करो। पृष्ठ १२४३ मनुष्योंको चाहिये कि जोई श्वरने सब प्राणियोंकी अधिक अवस्था और रोगोंकी निवृत्ति के लिये ओषधि रची हैं उनसे वैद्यकशास्त्रमें कही हुई रीतियोंसे सबरोगोंको निवृत्त करें पृष्ठ १२४६ विद्वान् लोग सब मनुष्योंके लिये दिव्यओषधिविद्याको देवें जिससे सबलोग पूरी अवस्थाको प्राप्त होवें पृष्ठ १२४७ स्त्रियों को चाहिये कि ओषधिविद्याका ग्रहण अवश्य करें।

क्योंकि इसके विना पूर्ण कामना सुख प्राप्ति और रोगों की निवृत्ति कभी नहीं हो सकती। पृष्ठ १२४८ स्त्री पुरुषों को उचित है कि बड़ी २ ओषधियों का सेवन करके सुन्दर नियमों के साथ गर्भ धारण करें और औषधियों का विज्ञान विद्वानोंसे सीखें। पृष्ठ १२५० हे मनुष्यो! तुम लोग जो ओषधियां दूर वा समीप से रोगों को हरने और बल करनेहारीं सुनीं जाती हैं उनको उपकारमें लाके रोग रहित होओ—

पृष्ठ १२५२ वैद्य लोगोंको योग्य है कि आपसमें प्रश्नोत्तरपूर्वक निरंतर ओषधियोंके ठीक २ ज्ञान से रोगोंसे रोगी पुरुषोंको पारकर निरन्तर सुखी करें और जो इनमें उत्तम विद्वान् हों वह सबमनुष्योंको वैद्यक शास्त्र पढ़ावें॥

पृष्ठ १२५४ हे वैद्य लोगो! जो प्रसिद्धहुए कफकी गुदेन्द्रियकी व्याधि वा अन्य बढ़े हुएरोगोंकी नाश करनेहारी ओषधि हैं और जो असंख्यात राजरोगों अर्थात् भंगदरादि और मुखरोगों और मसोंका छेदन करने हारे शूलको निवारण करने हारी हैं उन ओषधियोंको तुम लोग जानो॥

पृष्ठ १२५५ जो कोई ओषधि जड़ोंसे कोई शाखा आदिसे कोई पुष्पों, कोई फलों और कोई सब अवयवों करके रोगों को बचाती हैं उन ओषधियोंका सेवन मनुष्योंको यथावत् करना चाहिये। पृष्ठ १२५८ हे मनुष्यो! तुम लोग ओषधियोंके सेवनसे अधिक अवस्था वाले हो और धर्म का आचरण करने हारे होकर सब मनुष्योंको ओषधियोंके सेवनसे दीर्घ अवस्था वाले करो॥

पृष्ठ१२३१ से १२६१ तक स्वामी जी ने केवल ओषधियोंका गीत गाया है और भी अनेक जगह ऐसा ही लिखा है परन्तु कहीं किसी छोटेसे रोगकी भी ओषधि नहीं लिखी फिर ऐसे निरर्थक कथनसे क्या लाभ हुआ? वेद किस वैद्यक शास्त्रमें कही हुई रीतियोंसे रोगों को निवृत्त करनेका उपदेश करता है?। विद्वान् लोग मनुष्योंके लिये किस ग्रंथके अनुसार दिव्य ओषधि विद्या को देवें, स्त्रियां किस पुस्तकके द्वारा ओषधि विद्याका ग्रहण करें?। शोक है कि जिसके विना पूर्ण कामना सुख प्राप्ति और रोगोंकी निवृत्ति कभी नहीं हो सकती ईश्वरने वेदमें उसको कहीं भी स्पष्ट वर्णन न किया जब कि वेदमें किसी रोगकी ओषधिका पूर्ण वर्णन ही,

नहीं तो विद्वान् लोग किसीको ओषधियोंका विज्ञान कैसे सिखावें ? । कफकी गुदेन्द्रियकी व्याधि व अन्य बढ़े हुए रोगोंकी नाश करने हारी कौनसी ओषधि है ? : असंख्यात राजरोगों अर्थात् भगन्दरादिको निवारण करनेहारी ओषधियोंको हम लोग कहांसे लावें कौन ओषधि जड़ोंसे कौन शाखा आदि से कौन पुष्पों कौन फलों और कौन सब अवयवों करके रोगोंको बचाती हैं। इसका तो वेदमें कहीं संकेत भी नहीं, फिर उन ओषधियोंका सेवन मनुष्य यथावत् कैसे करें किस ओषधि के सेवनसे अधिक अवस्था वाले हो सकते हैं ? । वेदमें कहीं उस ओषधिका स्पष्ट वर्णन होता तो विचारे दयानन्द ही ५९ वर्षकी अवस्यामें क्यों मर जाते निदान वास्तवमें बात यही है कि स्वामी जी का सब लेख उनकी कपोल कल्पनासे परिपूर्ण है जिससे वेद की प्रशंसा तो नहीं, किन्तु निन्दा प्रकट होती है ॥

पृष्ठ १३१५ हे स्त्री ! तू जैसे असंख्यात और बहुत प्रकारके साथ सब अवयवों और गांठ २ से सब ओरसे अत्यन्त बढ़ती हुई दूर्वा घास होती है वैसे ही हमको पुत्र पौत्र और ऐश्वर्यसे विस्तृत कर । पृष्ठ १३१६ हे ईंटके समान दृढ़

...से युक्त शुभ गुणों से शोभायमान प्रकाशयुक्त स्त्री। जैसे ईंट सैकड़ों संख्यासे मकान आदिका विस्तार और हज़ारहसे बहुत बढ़ा देतीहै वैसे जो तू हम लोगों को सैकड़ों पुत्र पौत्रादि संपत्तिसे विस्तार युक्त करती और हज़ारह प्रकारके पदार्थों से विविध प्रकार बढ़ाती उस तेरी देने योग्य पदार्थोंसे हम लोग सेवा करें। पृष्ठ १३२६ हे पत्नी! जो तू शत्रु को असहने योग्य है तू पति आदि का सहन करती हुई अपने के उपदेश का सहन कर जो तू असंख्यात प्रकार के पराक्रमों से युक्त है सो तू अपने आप सेनासे युद्धकी इच्छा करते हुए शत्रुओं को सहन कर और जैसे मैं तुझ को प्रसन्न रखता हूं वैसे मुझ पति को तृप्त किया कर॥

पृष्ठ १४७८ हे पते! वा स्त्री तू बहुत प्रकारकी उत्तम क्रिया से मेरे नाभिसे ऊपर को चलने वाले प्राणवायु की रक्षा कर मेरे नाभिके नीचे गुह्येन्द्रिय मार्गसे निकलने वाले अपान वायुकी रक्षा कर। मेरे विविध प्रकार की शरीर की संधियोंमें रहने वाले व्यान वायुकी रक्षा कर, मेरे नेत्रोंको प्रकाशित कर, मेरे कानोंको शास्त्रोंके श्रवण से संयुक्त कर, प्राणों को पुष्ट कर इत्यादि॥

पृष्ठ १४२१ हे स्त्री ! जो तू पूर्व दिशाके तुल्य प्रका-शमान है, दक्षिण दिशाके समान अनेक प्रकारका विनय और विद्याके प्रकाशसे युक्त है। पश्चिम दिशाके सदृश चक्रवर्त्ती राजाके सदृश अच्छे सुख युक्त पृथिवी पर प्रकाशमान है उत्तर, दिशाके तुल्य स्वयं प्रकाशमान है, वही ऊपर नीचेकी दिशाके तुल्य घरमें अधिकारको प्राप्त हुई है सो तू सब पति आदिको तृप्त कर॥

पृष्ठ १४३० हे स्त्री वा पुरुष ! तू शरद ऋतुमें मेरी अवस्थाकी रक्षा कर मेरे प्राणकी रक्षा कर मेरे अपान वायुकी रक्षा कर मेरे व्यानकी रक्षा कर मेरे नेत्रोंकी रक्षा कर मेरे कानोंकी रक्षा कर वाणी को अच्छी शिक्षासे युक्त कर मेरे मनको तृप्त कर इत्यादि ऐसे २ वृथा प्रलापसे स्वामी जी ने वेदका वास्तविक अर्थ नष्ट भ्रष्ट किया है कोई बुद्धिमान् ऐसे लेख को पसन्द नहीं कर सकता। जो कोई ऐसे लेखोंको वैदिक जानेंगे वेद से श्रद्धा रहित हो जायंगे, स्वामी जी के शिष्योंको चा-हिये कि इस प्रकारके समस्त लेखोंको एकत्र करलें और प्रातःकाल अपनी २ स्त्रियोंके सन्मुख खड़े होकर पाठ किया करें !॥

पृष्ठ १३८६ ओ स्त्री अविनाशी सुख देने हारी इति स्वामी जी के मत और मति को वारम्वार धन्य है कि मुक्तिसुखको तो विनाशी मान बैठे और स्त्री को अविनाशी सुखकी देने हारी स्वीकार किया किसी वाममार्गीसे तो शिक्षा नहीं पाई ।॥

पृष्ठ १४१२ पीठसे बोझ उठाने वाले ऊंट आदिके सदृश वैश्य तू इत्यादि; स्वामीजी ने सदा वैश्यों हीके पदार्थ खाये उन ही के धनसे चैन उड़ाया और उनको पीठसे बोझ उठाने वाले ऊंट आदिके सदृश लिखा जो प्रत्यक्षके विरुद्ध है ईश्वरका कथन ऐसा कदापि नहीं हो सकता हमको उन वैश्योंकी बुद्धि पर महाशोक है जो कि दयानन्दी समाजोंमें नाम लिखाते हैं और पीठसे बोझा उठाने वाले ऊंट आदिके सदृश पदवी पाते हैं। स्वामी जी ने वैश्योंको केवल ऊंट ही के समान नहीं लिखा किन्तु उसके आगे आदि पद लगाया है जिसका आशय घोड़ा वा गधा है ॥

पृष्ठ १४५६ जिसने यह सकल विद्यायुक्त वेदको रचा है इति। वेदको ईश्वरने रचा है तो उसे अनादि क्यों कहते हो और अनादि मानो तो स्वामीजी को झूठा जानो

केवल चार संहिताओंही को पूर्ण वेद मानकर सकल विद्या युक्त कहना भी स्वामीजीका सर्वथा मिथ्यालाप है उन्होंने अपने ग्रन्थोंमें जो कुछ धर्माधर्मरूपविधि निषेध लिखा है चार संहिताओंमें तो वह भी नहीं मिलता सकल विद्याओंकी तो कथा ही क्या है? । हां जो लोग ११३१ शाखा और ब्राह्मण ग्रन्थोंको वेद मानते हैं वे वेदको सकल विद्या युक्त कहें तो आश्चर्य नहीं ॥

पृष्ठ १५४७ पूर्ण युवावस्थाकी प्राप्ति में कन्याओंकी पुरुष और पुरुषोंको कन्या परीक्षाकर अत्यन्त प्रीतिके साथ चित्तसे परस्पर आकर्षित होके अपनी इच्छासे विवाह कर धर्मानुकूल संतानोंको उत्पन्न करके आप्त विद्वानोंके मार्गसे निरन्तर चलें ॥ इति ॥ आप्त विद्वानोंके मार्ग से निरन्तर चलना बहुत ठीक है परन्तु इस प्रकार विवाह की आज्ञा किसी आप्त विद्वानोंने नहीं लिखी यह तो ईसाइयोंका अनुकरण है। मन्वादि आप्त विद्वानों के विरुद्ध है अतएव सर्वथा अशुद्ध है। अब दयानन्दियोंसे यह भी निवेदन है कि आप्त विद्वानोंके मार्गसे निरन्तर चलना हमको और अपने गुरुके लेखानुसार आपको स्वीकार है परन्तु हम प्रतिज्ञा करके कहते हैं कि दयानन्द

जो आप्तविद्वान् नहीं थे इस कारण उनकी कपोलकल्पनाओं पर चलना बुद्धिमानोंका काम नहीं यदि समाजी लोग उनको आप्त विद्वान् जानते हों तो हम इस विषय पर शास्त्रार्थ करनेको उद्यत हैं वे स्वामी जीको आप्तविद्वान् सिद्ध करें नहीं तो उनके लेखोंको सर्वथा त्याज्य समझें समस्त बुद्धिमानों को स्मरण रखना चाहिये कि जबतक समाजी लोग स्वामीजीको आप्तविद्वान् सिद्ध न करदें तबतक उनसे और किसी विषय पर वार्त्तालाप न करें शास्त्रार्थके लिये यही एक विषय सर्वोत्तम है यदि स्वामीजी आप्तविद्वान् सिद्ध होजायं तो उनका समस्त लेख स्वीकार है नहीं तो तिरस्कार।

पृष्ठ १६१८ आम्रादि वृक्षोंको काटनेके लिये वज्रादि शस्त्रोंको ग्रहण कर॥ इति॥ कहिये आम्रादि वृक्षोंको काटनेकी आज्ञा देना बुद्धिमानों का काम है वा अज्ञों का और इस आज्ञाका प्रचार होगा तो जगत् का उपकार होगा वा अपकार, वस्तुतः श्रुतिमें आम्रपद भी नहीं न आम्रवृक्षसे मनुष्यों को किसी प्रकार का दुःख होता है किन्तु सुख ही होता है बाबाजी ने ऐसी कपोलकल्पनाओंसे प्रत्यक्ष वेदकी निन्दा की है और मनुष्योंको परलोक में हानि पहुंचाने के लिये कमर बांधी है॥

पृष्ठ १७७७ सभापति आदिको योग्य है कि शूरवीर स्त्रियों की भी सेना स्वीकार करें और सेनामें अव्यभि- चारिणी स्त्री रहें इति ॥ यदि समाजी लोग अपने गुरु की इस आज्ञाको स्वीकार करेंगे सेनामें स्त्रियोंको भ- रती करानेका प्रचार करेंगे तो अवश्य शत्रुओं पर विजय पायंगे और लाभ उठायंगे क्योंकि धर्मवित् शूरवीर स्त्रि- यों पर हाथ न छोड़ेंगे उन पर शस्त्रप्रहार करनेसे अवश्य मुख मोड़ेंगे परन्तु जिनके यहां एकस्त्रीको ग्यारह पुरुषों तक नियोग करनेकी आज्ञा है वे इतनी अव्यभिचा- रिणी स्त्रियां कहां से लायंगे जो कि उन की सेना बनायंगे स्वामी जी की एक आज्ञा का प्रचार करेंगे तो दूसरी का अवश्य तिरस्कार करेंगे वास्तवमें स्वामी जी के दोनों लेख अशुद्ध हैं शास्त्र विरुद्ध हैं कोई बुद्धिमान् उनको कदापि न मानेगा अनर्थ ही जानेगा—

पृष्ठ २१३८ यहां बाबा जी ने अतीव अश्लील लेख लिखा है हम को उस के लिखनेसे घृणा है पृष्ठ २१८८ में भी ऐसी ही लीला है ॥

पृष्ठ २१६१ स्त्री पुरुष गर्भाधान के समयमें परस्पर मिलकर प्रेम से पूरित हो कर मुखके साथ मुख आंख

के साथ आंख नन के साथ मन शरीरक साथ शरीरका अनुसंधान करके गर्भ को धारण करें ॥ इति॥ यह लेख भी कोका पं० का अनुसरण है, ऐसे उपदेशोंमें बुद्धिमानों को श्रद्धा नहीं होती किन्तु घृणा होती है, अध्याय २१ पृष्ठ ७४ (छागस्य) बकरा आदि पशुओंके बीचसे लेने योग्य पदार्थका चिकना भाग अर्थात् घी दूध आदि ॥इति॥ बकरे आदिका घी दूध सर्वथा असंभव है यदि कोई स्वामी जी का पक्षी कहे कि उन्होंने बकरी लिखा होगा यंत्रालयमें भूलसे बकरे आदि लिखागया तो यह कथन अशुद्ध है क्योंकि (छागस्य) पद की व्याख्या है छागपद बकरेका ही वाचक है बकरीका नहीं यहांपूसरी बारके छपे सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ ३३१ का लेख स्मरणीय है कि इसका अर्थ न जानके भांग के लोटे चढ़ा अपना जन्म सृष्टि विरुद्ध कथन करनेमें नष्ट किया तथा पृष्ठ ३३२ देखिये क्या ही असंभव कथाका गपोड़ा भंग की लहरी में उड़ाया जिसका ठौर न ठिकाना—

अध्याय २१ पृष्ठ ८९ वट आदि वृक्षोंके तृप्ति कराने वाले फलोंको प्राप्त हो ॥इति॥ स्यात् स्वामी जी कभी एक दो दिनके भूखे होंगे खानेको और कोई प-

दार्थ प्राप्त न हुआ होगा दैवात् वट वृक्षके नीचे जा पहुंचे हों वहां भूखमें उसके फल खाये हों तब से उन्हें तृप्तिकारक और उत्तम माना हो परंतु और कोई मनुष्य अटवृक्षके फलों को तृप्ति कराने वाले और उन की प्राप्तिको उत्तम न मानेगा क्षुधा से पीड़ित होकर भी खाने योग्य न जानेगा ॥

अध्याय २१ पृष्ठ ९८ शरीर में स्तनों की जो ग्रहण करने योग्य क्रिया है उनको धारण करो ॥इति॥ विषयासक्तिके भरे गीत गाते हो कामदेवको जगाते हो यह ईश्वरकी आज्ञा नहीं है और वेद की व्याख्या नहीं आप ही की कपोल कल्पना है जो सर्वथा वृथा है॥

अध्याय २१ पृष्ठ १०५ सुंदर फलों वाला पीपल आदि वृक्ष इति ॥ पीपलको भी सुन्दर फलों वाला कहना जंगली मनुष्योंका काम है वास्तवमें (सुपिप्पलः) पद की व्याख्यामें सुन्दर फलों वाला पीपल आदि वृक्ष लिखना स्वामी जी का अज्ञता का परिणाम है ॥

अध्याय २१ पृष्ठ ११३ (छागम्) छेरी ॥इति॥ छाग शब्द पुलिंग है स्वामी जी को लिंगज्ञान भी नहीं पंडितायते बन बैठे (छागम्) पदका अर्थ छेरी महा अशुद्ध है किंतु बकरे को ऐसा होना चाहिये ॥

अध्याय २१ पृष्ठ ११५ जिन २ प्राण और अपानके लिये (छागेन) दुःख विनाश करने वाले छेरी आदि पशु से वाणीके लिये मेढ़ासे परमऐश्वर्यके लिये बैल से भोग करे उन सुंदर चिकने पशुओंके प्रति पचाने योग्य वस्तुओंका ग्रहण करे इति। छाग शब्द पुल्लिंग है उसका अर्थ छेरी आदि सर्वथा अशुद्ध है स्वामी जी की शेष व्याख्या अकथनीय है जिसका पाठ करनेसे भी सज्जनों को लज्जा आती है स्वामी जी अपनी झूठी बनावटों से वेदकी अतीव निंदा कर रहे हैं स्यात् उनके अन्तःकरणका यही अभिप्राय हो कि लोग वेद से घृणा करें और दुष्कर्मों में प्रवृत्त हों।

अध्याय २१ पृष्ठ ११८ वेदादि शास्त्रों की विद्या को पढ़कर महर्षि होवे—अध्याय २५ पृष्ठ ४४३ वेदादि शास्त्रों के ज्ञाता अध्यापक उपदेशक विद्वानोंका सदैव सत्कार करें॥ इति स्वामी जी दूसरी वारके छपे सत्यार्थ प्रकाशके पृष्ठ ५८७ में ब्रह्मादि महर्षियोंके बनाये ग्रंथों में वेद विरुद्ध वचन वतला चुके हैं। और पृष्ठ ७२ में लिख चुके हैं कि "असत्यमिश्रं सत्यं दूरतस्त्याज्यमिति" असत्य से युक्त ग्रंथस्थ सत्यको भी वैसे छोड़ देना चाहिये जैसे

विषयुक्त अन्न को, फिर यहां वेदादि शास्त्रोंकी विद्या को पढ़कर महर्षि होवें इस लेख में वेदके अतिरिक्त आदि शब्दसे किन शास्त्रोंकी विद्या पढ़नेका उपदेशहै॥

अध्याय २२ पृष्ठ १५५ सरस्वती नाम वाली नदी के लिये इति। वेदमें सरस्वती नाम वाली नदी यह लेख होनेसे दूसरी वारके छपे सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ २०५ का यह सिद्धान्त अशुद्ध ठहरता है कि इतिहास जिस का हो उसके जन्मके पश्चात् लिखा जाता है वह ग्रन्थभी उसके जन्मे पश्चात् होता है वेदों में किसी का इतिहास नहीं अस्तु॥

अध्याय २३ पृष्ठ २४८ जो पंडितोंकी पंडितानी होके मिलापकी क्रियाओंसे दिशाओं के समान शुद्ध पाक विद्या पढ़ी हुई हैं इति। दूसरी वारके छपे सत्यार्थ प्रकाशके पृष्ठ २६३ में प्रश्न है कि द्विज अपने हाथ से रसोई बनाके खावें वा शूद्रके हाथ की बनाई खावें इस के उत्तरमें लिखा है कि शूद्र के हाथकी बनाई खावें क्योंकि ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य वर्णस्थ स्त्री पुरुष विद्या पढ़ने राज्य पालने और पशु पालन खेती और व्यापारके काममें तत्पर रहैं पृष्ठ २६४ आर्यों के घर में

शूद्र अर्थात् मूर्ख स्त्री पुरुष पाकादि सेवा करें इत्यादि अब पंडितानियों को पास विद्या पढ़ाने लगे यह क्या सत्यार्थप्रकाशका खण्डन नहीं है। अध्याय २४ पृष्ठ ३३१ तथा ३३२ हे मनुष्यो ! जैसे पक्षियों के गुण जानने वाला जन मुर्गे उल्लू पक्षियों नीलकंठ पक्षियों मयूरों तथा कबूतरों को अच्छे प्रकार प्राप्त होता है वैसे इनको तुमभी प्राप्त होओ जो मुर्गा आदि पक्षियों के गुणों को जानते हैं वे सदा इनको बढ़ाते हैं इति। हे दयानंदानुयायियो ! जो स्वामी जी ने वेदका अर्थ यथार्थ किया है और तुमने मुर्गे और उल्लू तथा नीलकंठ के गुणों को जाना है तो तुम इनकी वृद्धि में प्रयत्न क्यों नहीं करते? मुर्गोंके गुणोंको तो स्यात् मुसलमान लोग जानते होंगे क्योंकि वे प्रायः उनको पालते हैं कबूतरों के गुणों को हिन्दू और मुसलमान दोनों जानते होंगे क्योंकि उन को दोनों पालते और बढ़ाते हैं परन्तु उल्लू और नीलकंठ पक्षियों के गुणों को कोई भी नहीं जानता क्योंकि उन को कोई नहीं पालता और बढ़ाता किन्तु दोनों के अवगुण जानते हैं और उल्लूका स्थान पर बैठना भी बुरा जानते हैं इन दोनोंके

के गुण यदि स्वामीजीकी कृपासे आप लोगोंको विदित होगये हों तो अपने स्थानोंमें शुक सारिका की समान उल्लू नीलकंठ पक्षियोंको अवश्य पालिये और उनकी वृद्धिमें प्रयत्न कीजिये स्वामीजी के वेदभाष्यसे वेद म- हिमाकी सर्वथा हानि है और धर्मकी ग्लानि बुद्धिमानों को उन के लेख पर विश्वास नहीं है क्योंकि यथार्थ अर्थ का प्रकाश नहीं है ॥

अध्याय २४ पृष्ठ ३३३ हे मनुष्यो ! जैसे पक्षियोंका काम जाननेवाला जन ऐश्वर्यके लिये बटेरों, प्रकाशके लिये कौलीक नामक पक्षियों विद्वानोंकी स्त्रियोंके लिये जो गौओंको मारती हैं उन पखेरियों, विद्वानोंकी बहि- नियों के लिये, कुलीक नामक पखेरियों और जो अग्नि के समान वर्त्तमान गृहपालन करने वाला उसके लिये पा- रुष्णा पक्षियोंको प्राप्त होता है वैसे तुम भी प्राप्त होओ इति । यह वेदका अर्थ है या गप्पाष्टक स्वामीकी गप्प ! कोई समाजी स्वामीजीके इस लेखका अभिप्राय वर्णन क- रे और उसके फलको समझे—धन्य !! आगे भी अध्याय २४ में प्रायः ऐसीही असमञ्जस लीला है विस्तार भयसे नहीं लिखते जिसको देखना हो वहां देखले फिर अध्याय ५ मंत्र १ । ३१ । ३२ । ३४ । ३८ । ३९ । ४० ४१ । और अध्याय

२६ मंत्र १६ तथा अध्याय ३३ मंत्र ७३ अध्याय ३४ मंत्र ३२ अध्याय ३८ मंत्र ५ की व्याख्या सर्वथा निरर्थक है कोई विद्वान् अपने ग्रन्थमें ऐसा वृथा लेख न करेगा तो वेद में ऐसा निष्फल उपदेश कैसे संभव है ॥

अध्याय २५ पृष्ठ ३७६ स्थूल गुदेन्द्रियके साथ अन्धे सांपोंको इत्यादि सर्वथा अश्लीलऔरअसमंजसलेख स्वामीजी की कपोलकल्पना है जो कोई ऐसे लेखोंको वस्तुतः वेदका अर्थ जानेगा निःसंदेह वेदसे श्रद्धा रहित हो जायगा ।

अध्याय २६ पृष्ठ ४८३ स्त्री पुरुष उत्कण्ठा पूर्वक संयोग करके जिन सन्तानोंको उत्पन्न करें वे उत्तम गुणवालेहोते हैं इति—सम्पूर्ण सज्जनलोग विषयासक्ति की निवृत्ति ही का उपदेश करते हैं परन्तु श्रीस्वामी कलियुगाचार्य महाराज दयानन्द संन्यासीजी निज शिष्योंको विषयासक्तिकी प्रवृत्तिमें आरूढ़ करते हैं वेद का अभिप्राय ऐसा कदापि नहीं है !

अध्याय २७ पृष्ठ ५०६ जैसे परमेश्वर बड़ा देव सब में व्यापक और सबको सुख करनेहारा है वैसा वायुभी है ॥ इति ॥ वायुको ईश्वरकी समान बड़ा देव आदि कहना दयानन्द जी की विक्षिप्त बुद्धिका फल है कोई बु-

द्विनान् कदापि ऐसा न कहेगा। अध्याय २७ पृष्ठ ५२४ हे सत्यके रक्षक जमाईके तुल्य वर्त्तमान आश्चर्यरूप कर्म करनेवाले बहुत बलयुक्त विद्वान्॥ इति॥ क्यों भाई दयानन्दियो! तुमही धर्मसे कहो स्वामीजीका यह लेख युक्त है वा अयुक्त फिर इसीके भावार्थमें लिखते हैं कि जैसे जमाई उत्तम आश्चर्यगुणोंवाला सत्य ईश्वरका सेवक हुआ स्वीकारके योग्य होता है वैसे वायु भी स्वीकार करने योग्य है। सत्य कहना यह पदार्थके विरुद्ध और अयुक्त है वा नहीं ?॥

अध्याय २७ पृष्ठ ५२६ हे शूर निर्भय सभापते! विना दूधकी गौओंके समान हमलोग इस चर तथा अचर संसारके नियन्ता सुखपूर्वक देखने योग्य ईश्वरके तुल्य समर्थ आपको संमुखसे सत्कार वा प्रशंसा करें॥ इति॥ किसीको ईश्वरको तुल्य कहना पूर्ण नास्तिकता है। ईश्वरके तुल्य कोई हुआ न है और न होगा, देखो दूसरीवारके छपे सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ २१९ में आप स्वामीजीने लिखा है कि जीवका परम अवधि तक ज्ञान बढ़े तोभी परिमित ज्ञान और सामर्थ्यवाला होता है। अनन्त ज्ञान और सामर्थ्यवाला कभी नहीं

हो सकता—आर्याभिविनय में (यस्मान्नजातः) इस मन्त्र की व्याख्या में लिखा है कि जिससे बड़ा तुल्य वा श्रेष्ठ न हुआ, न है, और न कोई कभी होगा। श्वेताश्वतरोपनिषद् में है, कि (न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते) इसके अनेक प्रमाण हैं, निदान ईश्वर के समान किसी को कहना महा नास्तिकता है। स्वामीजी ने जिस दिन से धनादि पदार्थों में स्नेह किया, सर्वथा बुद्धि नष्टहो गई, और उलटी ही सूझने लगी। अध्याय २८ पृष्ठ ६१२ हे मनुष्यो! जैसे बैल गौओं को गाभिन करके पशुओं को बढ़ाता है वैसे गृहस्थ लोग स्त्रियों को गर्भवती कर प्रजा को बढ़ावें ॥इति॥ जैसे बैल गौओंको गाभिन करके, इस दृष्टान्तसे क्या अभिप्राय है, यही न? कि जैसे एक बैल अनेक गौओंको सम्बन्ध विचारके विनी गाभिन करता है, उसी पशु व्यवहार का प्रचार करके स्त्रियों को गर्भवती करो। दूसरी बारके छपे सत्यार्थप्रकाश के पृष्ठ ९७ पर यह तो लिख ही दिया कि उत्तम स्त्री सब देश तथा सब मनुष्यों से ग्रहण करें। यदि कुछ काल और जीते रहते तो स्पष्ट कह देते कि वेदमें

गोत्र आदि का भी निषेध नहीं, जिससे चाहे विवाह करले, एक स्त्री को ग्यारह पुरुषों और एक पुरुष को ग्यारह स्त्रियों तकसे नियोग करनेकी आज्ञा तो अनेक झूठे प्रमाण और अयुक्तियोंसे गर्ज २ कर कर ही चुके थे वेदभाष्य में पशु व्यवहार की भी विधि कर दिखाई शास्त्र और विद्वानों का काम मनुष्योंको विषयासक्ति में प्रवृत्त करने का नहीं, किन्तु निवृत्त करने का है। परन्तु दयानन्द जी ने अपने अनुयायियों पर दया करके उनको विषयासक्तिहीमें प्रवृत्त किया और शास्त्र, विहित धर्म कर्मों से निवृत्त किया॥

अध्याय २९ पृष्ठ ७०१ माताके तुल्य सुख देने वाली पत्नी और विजय सुखको प्राप्त हों॥ इति॥ पत्नी को माताके तुल्य सुख देने वाली कहना बुद्धिमानोंका काम नहीं किन्तु महा अज्ञों का है॥

अध्याय ३० पृष्ठ ७७२ हे जगदीश्वर! आप मच्छियों से जीवने वाले को उत्पन्न कीजिये॥इति॥ मच्छियों से जीवने वाले या तो जो लोग मछलियें मार कर बेचते हैं॥ और उनकी आयसे अपना जीवन करते हैं,

वे हैं, अथवा जो लोग मत्स्य मांस अधिक खाते हैं वे हो सकते हैं, निदान दोनों हिंसा कर्मके अपराधी हैं यजुर्वेद भाष्य अध्याय २९ पृष्ठ ६७९ में स्वामी जी ने लिखा है कि अहिंसारूप धर्मको सेवें। फिर क्यों बुद्धि नष्ट हो गई जो हिंसकोंकी उत्पत्तिके निमित्त ईश्वरसे प्रार्थना करने लगे। विनाशकाले विपरीतबुद्धिः॥

अध्याय ३० पृष्ठ ७८१ गाने बजाने नाचने आदि की शिक्षाको प्राप्त होके आनन्दित होवें॥ इति॥ क्यों भाई समाजियो! तुम स्वामीजीकी इस आज्ञाको उचितजानते हो वा अनुचित यदि प्रथमपक्ष स्वीकार है तो स्वीकार करो द्वितीय पक्षका ग्रहण करो तो स्वामी जी का वेदभाष्य झूंठा कपोलकल्पित अग्राह्य समझो यदि इसमें कहीं२ सत्यभी है तो "असत्यमिश्रं सत्यं दूरतस्त्याज्यमिति" असत्यसे युक्त ग्रन्थस्थ सत्य को भी वैसे छोड़ देना चाहिये जैसे विषयुक्त अन्नको स्वामी जी हीके लिखे इस न्यायसे सर्वथा त्याज्य जानो यहभी ध्यान रहै कि स्वामीजीने सत्यार्थप्रकाश मुद्रित सन् १८८४ के पृष्ठ १४५ पर गाने बजाने नाचने आदिको का-

मोत्पन्न व्यसन लिखा है वेदभाष्यमें उसी की आज्ञा देते है यह उनकी प्रकट अज्ञता है विद्वानों के लेख ऐसे कदापि नहीं होते ॥

अध्याय ३० पृष्ठ ९८३ हे परमेश्वर सांप आदि को उत्पन्न कीजिये ॥ इति ॥ ऐसा मूर्ख जगत्में कोई न होगा जो सांपोंकी उत्पत्ति के लिये परमेश्वर से प्रार्थना करै ॥

अध्याय ३० पृष्ठ ९८६ "सब लोगोंको चाहिये कि प्रजाके रक्षक ईश्वर और राजाको आज्ञा सेवन तथा उपासना नित्य किया करें" ॥इति॥ एक परब्रह्म पुरुषोत्तम परमात्माके अतिरिक्त किसी देव वा मनुष्य की उपासना करना कदापि उचित नहीं देखो अध्याय ३१ पृष्ठ ९८९ में स्वामीजी भी लिखते हैं कि "परमेश्वरको छोड़के अन्यकी उपासना तुम कभी न करो" देखिये जिनको अपने ही पूर्वापर लेखमें परस्पर विरोध न सूझा उनसे सत्यासत्यके निर्णय की क्या आशा होसकती है अध्याय ३२ पृष्ठ ९९६ हे बहुत पदार्थोंमें वास करनेहारे

परमात्मन् जो ये मेरी वाणी आपको निश्चय कर बढ़ावे ॥ इति ॥ बड़ेलोग छोटोंको ऐश्वर्यादि वृद्धिका आशीर्वाद दिया करते हैं छोटे बड़ोंको नहीं, स्वामी जी ईश्वरके भी बड़े बन गये जो परमात्माको वृद्धिका आशीर्वाद देने लगे यह भी ध्यान करना चाहिये कि परमात्मा में किस बात की न्यूनता है जो स्वामी जी अपने आशीर्वादसे उसकी वृद्धि करना चाहते हैं। धन्य ईश्वरको न मानने वाले नास्तिक लोग तो बहुत सुने गये परंतु ईश्वरको छोटा और अपने को बड़ा मानने वाला तथा ईश्वरको आशीर्वाद देने वाला आज तक कोई न सुनाथा सो कलियुग में स्वामी दयानंद जी ने अपनेको प्रकट किया ऐसे पुरुषको नास्तिक शिरोमणि कहा जाय तो अनुचित नहीं ॥

अध्याय ३३ पृष्ठ ९७९ हे मनुष्यो तुम लोग जैसे सुंदर चालोंसे युक्त शीतकारी चन्द्रमा शीघ्र शब्द करते हींसते हुए घोड़ों के तुल्य सूर्यके प्रकाश में अंतरिक्ष के बीच अच्छे प्रकार शीघ्र चलता है इत्यादि ऐसे लेखोंसे वेद की स्तुति होती है वा निन्दा ? निन्दा ॥

अध्याय ३४ पृष्ठ १०३०। हे मनुष्यो ! जैसे सूर्यसे पृथ्वी तक १२ कोश पर्यंत ॥इति॥ यह स्वामी जी की खगोल विद्या है जो सूर्यसे पृथिवी तक १२ कोश लिखते हैं धन्य ! अध्याय ३५ पृष्ठ ११०६ हे मनुष्यो ! जो लोग परमेश्वर ने नियत किया कि धर्मका आचरण करना और अधर्मका आचरण छोड़ना चाहिये इस मर्यादा को उल्लङ्घन नहीं करते अन्याय से दूसरे के पदार्थोंको नहीं लेते वे नीरोग होकर सौवर्ष तक जी सक्ते हैं और ईश्वराज्ञा विरोधी नहीं, जो पूर्ण ब्रह्मचर्यसे विद्या पढ़ के धर्मका आचरण करते हैं उनको मृत्यु मध्यमें नहीं दबाता ॥इति॥ यहांसे सम्यक् सिद्ध हो गया कि स्वामी जी ने धर्मका आचरण नहीं किया। और अधर्म का आचरण नहीं छोड़ा। अन्याय से दूसरे के पदार्थों को लिया, और पूर्ण ब्रह्मचर्यसे विद्या नहीं पढ़ी, यदि ऐसा करते तो वे नीरोग होकर सौ वर्ष तक अवश्य जीते। मृत्यु उनको मध्यमें कदापि न दबाता, परन्तु वे प्रायः रोग ग्रसित रहे। और ५९ वर्षकी अवस्था में मरगये ॥

अध्याय ३६ पृष्ठ १२४४ हे परमेश्वर ! हम लोग आप

के शुभ गुण कर्म स्वभावोंके तुल्य अपने गुण कर्म स्वं-भाव करनेके लिये आपको नमस्कार करते हैं ॥इति॥ अब कि स्वामी जी दूसरी वार के छपे सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ २१९ में आप लिख चुके हैं कि जीवका परम अ-वधि तक ज्ञान वढ़े तौ भी परिमित ज्ञान और सामर्थ्य वाला होताहै।अनंत ज्ञान और अनंतसामर्थ्य वाला कभीं नहीं हो सकता, फिर वेदभाष्य में ईश्वर के गुण कर्म स्वभावोंके तुल्य अपने गुण कर्म स्वभाव करने के लिये परस्पर विरुद्ध लेख क्यों कर वैठे ? । क्या ईश्वरको भी परिमित ज्ञान और सामर्थ्य वाला समझा है । वाहरी वुद्धि । ॥

अध्याय ३९ पृष्ठ १२३७ जब कोई मनुष्य मरें तब श-रीरके वरावर तोल घी लेके उसमें प्रत्येक सेर में एक रत्ती कस्तूरी एक मासा केसर और चन्दन आदि काष्ठों को यथा योग्य सम्हालके जितना ऊर्ध्ववाहु पुरुष होवे उतनी लम्बी साढ़े तीन हाथ चौड़ी और उतनी ही गहरी एक विलांद नीचे तलेमें वेदी वनाके उसमें नीचे से अधवर तक समिधा भरके उस पर मुर्दे को धर के

फिर मुर्दे के इधर उधर और ऊपर से अच्छे प्रकार स-मिधा धरके वक्षःस्थल आदि में कपूर धर कपूरसे अ-ग्नि को जलाके चिता प्रवेश कर जब अग्नि में जलने लगे तब इस अध्याय के इन स्वाहान्त मन्त्रोंकी वार २ आवृत्ति से घी का होम कर मुर्दे को सम्यक् जलावें। इस प्रकार करने में दाह करने वालों को यज्ञ कर्म के फलकी प्राप्ति होवे। और मुर्देको न कभी भूमिमें गाड़े, न वनमें छोड़ें, न जल में डुबावें, विना दाह किये सं-बन्धी लोग महा पाप को प्राप्त होवें क्योंकि मुर्देके विगड़े शरीरसे अधिक दुर्गंधि बढ़ने के कारण चराचर जगत्में असंख्य रोगों की उत्पत्ति होती है इति। सं-वत् १९३३ की छपी संस्कार विधिके पृष्ठ १४१ और दू-सरी वार के छपे सत्यार्थप्रकाश के पृष्ठ ४७७ में स्वामी जी ने मुरदे को शरीर समान घी से फूंकना लिखा था वही स्वकपोल कल्पना यहां प्रकट की है जिससे चेले लोग जान जांय कि गुरुजी ने संस्कार विधि और स-त्यार्थप्रकाश में मृतक को शरीर प्रमाण घृत से दाह करना वेदानुकूलही लिखा है परन्तु वेदमें स्वामीजीके

लेख को गन्ध भी नहीं उन्हों ने जिस मंत्र के भावार्थ में पूर्वोक्त इतना लम्बा चौड़ा लेख किया है वह मंत्र यह है यथाहि (स्वाहा प्राणेभ्यः स्वाधिपतिकेभ्यः पृथिव्यै स्वाहाऽग्नये स्वाहाऽन्तरिक्षाय स्वाहा वायवे स्वाहा दिवे स्वाहा सूर्याय स्वाहा) अध्याय ३९ मंत्र १। विद्वज्जन ध्यान करें कि बाबाजी ने वेद मन्त्रके किस पदसे मृतक शरीर के बराबर घी और प्रत्येक सेर में एक रत्ती कस्तूरी एक माशा केसर और चंदनादि काष्ठ लिखा है तथा साढ़े तीन हाथ चौड़ी और इतनी ही गहरी एक विलांद नीचे तले में वेदी बनाना आदि किस २ पदका आशय समझा है। वस्तुतः यह सम्पूर्ण उनकी कपोल कल्पना है जो कोई स्वामीजीको वेदज्ञ जाने और सत्यवक्ता माने उनके इसी लेखको वेद मंत्रसे यथावत् सिद्धकरे नहीं तो उनको मिथ्यावादी समझले फिर स्वामी जीका यह लेख कि मुरदेको न कभी वनमें छोड़े विनादाहकिये संबंधी लोग महापापको प्राप्तहोवें संवत् १९३६कीछपी संस्कार विधिके विरुद्ध है क्योंकि वहां पृष्ठ १४१ में यह लिखा है कि मृतक शरीर प्रमाणे बराबर घी और कपूर

चन्दनादि सुगंध साथ लेले न्यूनसे न्यून बीस सेर घी अवश्य होना चाहिये यदि इतना भी घृतादि न होय तो न गाड़े न जलमें छोड़े और न दाह करे किंतु दूर जाके जंगल में छोड़आवे। कहिये कैसा परस्पर विरुद्ध लेख है? अब संस्कारविधिको झूंठा माने या वेदभाष्यको? अध्याय ४० पृष्ठ १२३५ वेही मनुष्य असुर, दैत्य, राक्षस, तथा पिशाच आदि हैं जो आत्मा में और जानते वाणीसे और बोलते और करसे कुछ और ही हैं इति। प्रायःसमाजी लोग स्वामीजीके अनेक लेखोंको आत्मा में तो मिथ्या ही जानते हैं परन्तु पक्षपात और हठदुराग्रहके कारण वाणीसे उनको सत्य ही कहते हैं और करते कुछ और ही हैं यदि कोई दयानन्दी हमारे इस सत्यलेखपर विश्वास न करे तो इसके निर्णयार्थ एक सभा नियत करके दशवीस उत्तम वयांस्थ प्रतिष्ठित बुद्धिमान् समाजियों को बुलावे हम सम्पूर्णके समक्ष उन महाशयोंके मुख से अपने कथनकी सत्यता सिद्ध करादेंगे॥ इति॥

भजन।

तेरे दयाधर्म नहीं मनमें मुखको क्या देखै दर्पन में॥
॥ध्रु०॥ है यह देह तेरा क्षणभङ्गुर जैसे दामिनी घन में॥

क्या अभिमान करै तू इसपर होगा भस्म दहन में ॥१॥ काम क्रोध और लोभ मोह यह तस्कर तेरे सदन में॥ महा विभवको निशदिन लूटैं करके छिद्र भवनमें।२। परनारी अहि विष समान है मत फंस फंद मदनमें॥ पराधन से कर घृणा सर्वदा जैसी घृणा वमनमें ॥३॥ रे मतिमंद नहीं भय तुझ को क्यों पशु यूथहननमें॥पर पीड़ा समपाप नहीं है नहिं लय अनृत कथनमें ॥ ४ ॥ हों इंद्रिय कब तृप्त भोगसे है आनंद दमनमें ॥क्या जिह्वाका स्वाद मनाये क्या बहुमूल्य वसनमें॥५॥ सुतनारीसे स्नेह बढ़ाया दर्पित है अति धन में॥ बालकुमार युवा सब खोई कर कुछ चौथेपन में॥६॥ जिस जिह्वाने वेद पढ़ा नहिं सो है वृथा वदनमें॥ जो नहिं करै मधुर संभाषण गिनिये न तिसे रसनमें ॥७॥ विधि निषेध वही सत्य जानिये है जो वेद वचनमें॥तद्विरुद्ध और बाह्य-जीवको डाले अतुलगहनमें।।८॥ हैं प्रमाण प्रत्यक्ष ईश के रवि शशि आदि गगनमें ॥ क्यों नहीं प्रेम करै उस प्रभुसे नहीं सुख अन्य व्यसनमें ॥ ९ ॥ जगन्नाथ कर निजमन अर्पण श्री जगदीश भजनमें। होकर सेवक परब्रह्मका किस के फिरे यजन में ॥ १० ॥

हे प्रभु हमें बचाओ ॥ ध्रु० ॥ चारों ओर शत्रु दल गरजैं इन से शीघ्र छुड़ाओ । आय फंसे हम दावानल

में तुमहीं इसे वुझाओ ॥ १ ॥ काम क्रोध और लोभ मोह की बाधा सकल मिटाओ । वेद विरुद्ध और वाह्य कर्म से मन का वेग हटाओ ॥ २ ॥ पड़ी भंवर में नाव हमारी तिस को पार लगाओ । निज स्वरूपका ज्ञान हमें दो भव के फंद कटाओ ॥ ३ ॥ जगन्नाथ जग दीश शरण ले केवल ब्रह्म मनाओ । प्रणव वाच्य अति रिक्त किसीको कभी न शीश नवाओ ॥ ४ ॥

अरे ! मन क्यों तू करे अभिमान ॥ ध्रु० ॥ सुतदारा सुखके हैं साथी यह निश्चयकर जान । प्राण गये सब विमुख होंयगे पहुंचावैं श्मशान ॥ १ ॥ रावण और शिशुपाल कहां हैं कहां कंसके स्तान । दुर्योधनने क्या फल पाया करके दर्प निदान ॥ २ ॥ परब्रह्म जो अखिलेश्वर है धर उस का उर ध्यान । कटैं बंध भवके सब जिस से हो सुख अतुल महान ॥ ३ ॥ सत्यशास्त्र (तीर्थ) वेदादिकमें कर विधि अनुसार स्नान । सकल जन्मका मल छुट जावै पावै पदनिर्वान ॥ ४ ॥ सुख और दुःख सकल प्राणीमें निजवपु सम पहिचान । दयादृष्टि है सब पर जिसकी सो पावै कल्यान ॥ ५ ॥ काम क्रोध और लोभ मोहको अतिदारुण रिपुजान । रागद्वेष रहित कर सबका यथा योग्य सन्मान ॥ ६ ॥ नहीं मुक्तिसे पुनरा-

वृत्ति गावैं वेद पुरान। व्यासादिकने यही लिखा है तद्विरुद्ध अज्ञान ॥ ७ ॥ जगन्नाथ सच्चिदानन्दका प्रेम सहितकर गान। जो नर अन्य देवको पूजैं वे हैं पशू समान ॥ ८ ॥

अरे मन भज भगवतका नाम ॥ध्रु०॥ जिसदिनहो प्रस्थान यहांसे कोई न आवे काम। तृण भी साथ जाय नहीं उनके जिनके लाखों ग्राम ॥१॥ नहीं शुक्ति हो रजत कदापि होय सर्प नहीं दाम। असत्यार्थको सत्य कहै तू हुई बुद्धि क्यों वाम ॥२॥ परब्रह्मके भजन विना नहीं कहीं मनको उपराम। जो शरणागत हो उस प्रभुकी सो पावै निजधाम ॥३॥ अज अकाय अव्यक्त अगोचर नहीं रक्त नहीं श्याम। ध्यान धरें उरमें मुनि जिसका सो भज आठों याम ॥ ४ ॥ क्या अभिमान करे तू तनुका सोच मूर्ख परिणाम। क्षण में होय भस्म की ढेरी काम न आवे चाम ॥ ५ ॥ लोभ मोह से चित्त हटाकर त्याग काम और भाम। परपीड़ामें जान मरण जिन कीजे सब से साम ॥ ६ ॥ इधर उधर क्यों फिरै भटकता सहै शीत और घाम। कृपा कटाक्ष बिन पुरुषोत्तमके कंह पावै विश्राम ॥७॥ जगन्नाथ कर परब्रह्म

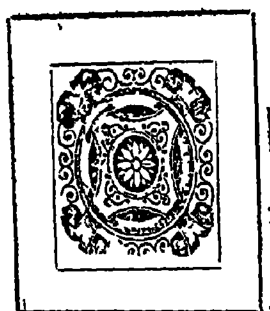
को वारम्बार प्रणाम । शरणागत से जिसकी पावै सब प्रकार बल धाम ॥ ८ ॥

वृथा अभिमान करता है अरे मतिमंद तू बलका।
स्पष्ट आंखोंसे दाखै है लगा है तार चल चलका ॥ १ ॥
जो करता है सो अब करले भरोसा है नहीं कलका।
जिसे कहते हैं क्षण भंगुर बबूला जानले जलका ॥ २ ॥
गया रावण कहां मित्रो हुई गति कंसकी कैसी । रहा नहीं चिन्ह भी कोई जगत्में कौरवी दलका ॥ ३ ॥
करो तुम यत्न कुछ ऐसा कि जिस से बंध कट जावे। है सञ्चित जो तुम्हारा ही अनेकों जन्मके मल का ॥ ४ ॥
हुए हैं विष्णु शिव ब्रह्मा प्रकटरूप जिस निरंजन के।
नहीं तू किस लिये करता है ध्यान उस भक्त वत्सलका ॥ ५ ॥ हटाकर चित्त विषयोंसे लगा मन ब्रह्ममें सम्यक्।
नहीं उसके सिवाय दाता कहीं कोई अभय फलका ॥६॥
अहिंसा धर्म को वर्तो वचन मन काय से प्यारे।
निकालो चित्त से अपने उपद्रव द्वेष मद छलका ॥७॥
मिटा सक्ता नहीं कोई जो है प्रारब्धका तेरे। प्रकट दृष्टान्त है इसमें युधिष्ठिर राम और नल का ॥ ८ ॥
जगन्नाथ आज्ञा पालन करो तन मन से स्वामी की।

शुभाशुभ कर्म सब तेरा प्रकट है उसपै पल पलका ॥९॥

कुछ सोच समझकर काम करो एकदिन यहांसे उठ जाना
है। जो चित्त दुखावैं दीनोंका उनकोअतिदुःख उठानाहै॥१॥
वेदोक्त कर्ममें प्रीतिकरो जो आवागमन छुड़ाना है। अब
कर प्रबन्ध तू आगेका बीतीका क्या पछताना है।।२॥ सद्ध·
र्म कोषका सञ्चयकर सुख अक्षय जिससे पाना है। मरने
पर काम न आयेगा घरमें जो तेरे खज़ाना है॥३॥ है का·
मक्रोध अति प्रबल शत्रु क्यों इनका बना निशाना है।
बच लोभ मोहके बाणोंसे जो मर्मस्थान बचाना है॥४॥
क्यों मद्य मांसके भोजनमें तुमने अपना सुखमाना है।
जो औरोंको कलपायेगा उसको भी तो कलपाना है॥५॥
धन दे दीन और विद्वानोंको जो तुझको धर्मकमाना है।
अज्ञोंको देना द्रव्य आदि धन अपना वृथा लुटाना है॥६॥
ग्यारह पतिका उपदेश करें यह कलिका बुरा जमाना है।
सब बातें उलटीगातेहैं जिनको मत नया चलाना है॥७॥
सच्चिदानंदसे विमुख हुआ और विषयोंमें फंस जाना है॥
रे मूर्ख गई कहां बुद्धि तेरी क्या हुआ कहीं दीवाना है॥८॥
है मुक्ति उसको जगन्नाथ जिसने प्रभुको पहिचाना है।
कर परब्रह्मको ध्यानसदा सबको यही मन्त्र सुनाना है॥९॥

॥ इति ॥



पुस्तक मिलनेका पताः—

मैनेजर-ब्रह्मप्रेस

इटावा।